"अज्ञेय की कहानियों में स्त्री–पुरुष संबंधों की अभिव्यक्ति"

(जे. एन. यू. में एम. फिल. उपाधि हेतु प्रस्तुत लघु शोध प्रबंध)

शोध निर्देशक

डॉ0 गोबिन्द प्रसाद

शोधार्थी

राज शेखर

भारतीय भाषा केन्द्र

भाषा, साहित्य एवं संस्कृति अध्ययन संस्थान

जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय

नई दिल्ली–110067

2004

जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय

JAWAHARLAL NEHRU UNIVERSITY

CENTRE OF INDIAN LANGUAGES
SCHOOL OF LANGUAGE, LITERATURE & CULTURE STUDIES
NEW DELHI-110067.

Dated: 20-7-2004

DECLARATION

I declare that the material in this dissertation entitled, ***"AGHEYA KI KAHANIYON MEIN STREE - PURUSH SAMBANDHON KI ABHIVYAKTI "*** submitted by me is original research work and has not been previously submitted for any other degree of this or any other university.

Raj Shekhar
Signature

RAJ SHEKHAR

20.7.04

Dr. GOBIND RRASAD
Supervisor
Associate Professor, CIL
School of Language, Literature &
Culture Studies, JNU, New Delhi-67.

Prof. NASEER AHMAD KHAN
Chairperson, CIL
School of Language, Literature &
Culture Studies, JNU, New Delhi-67.

''माता–पिता

को

जिन्होंने मुझे हमेशा प्रेरित किया''

अनुक्रम

भूमिका	i-iii
1. अज्ञेय की कहानी–दृष्टि	1–19
2. अज्ञेय की कहानियों में मनोविश्लेषण : स्त्री–पुरुष संबंधों के विशेष संदर्भ में	20–42
3. अज्ञेय की कहानियों में स्त्री–पुरुष संबंधों का स्वरूप	43–84
4. उपसंहार	85–89
5. ग्रंथ–सूची	90–92

भूमिका

एम.ए. में अध्ययन के दौरान ही मैंने कवि की कहानियों पर शोध करने का निश्चय किया था। चूँकि कहानीकार के रूप में अज्ञेय ने मुझे अधिक प्रभावित किया था, अतः इनकी कहानियों पर ही शोध करना मुझे रूचिकर लगा। अज्ञेय की यह विशेषता है कि वे एक अच्छे कहानीकार और उपन्यासकार के साथ–साथ एक अच्छे कवि भी हैं। क्या कवि–व्यक्तित्व का प्रभाव कहानीकार–व्यक्तित्व पर भी पड़ता है ? इस जिज्ञासा ने भी मुझे उनकी कहानियों पर शोध करने के लिए प्रेरित किया।

मेरे सामने यह सवाल महत्त्वपूर्ण था कि अज्ञेय की कहानियों को लेकर किस प्रकार का कार्य किया जाये ? कई तरह के विषय बन रहे थे। सभी विषय उनकी कहानियों की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण थे, किन्तु मुझे उनकी कहानियों में स्त्री–पुरुष संबंधों की अभिव्यक्ति अच्छी लगी। इस तरह मेरे लघु शोध–प्रबंध का विषय "अज्ञेय की कहानियों में स्त्री–पुरुष संबंधों की अभिव्यक्ति" बना। मैंने अपने शोध–विषय का अध्ययन तीन भागों में बाँटकर किया है।

पहला अध्याय 'अज्ञेय की कहानी–दृष्टि' है। इस अध्याय में कहानियों के बारे में अज्ञेय की मान्यताओं पर विचार किया गया है। उन्होंने अपने कहानी–संकलन की भूमिका में कहानी के लिए जिन बिन्दुओं की अनिवार्यता पर बल दिया है, उनका इसमें विश्लेषण किया गया है। इसमें न सिर्फ उनकी कहानियों को अपितु कहानी–विधा को जानने और समझने का प्रयास किया गया है।

दूसरा अध्याय "अज्ञेय की कहानियों में मनोविश्लेषण : स्त्री–पुरुष संबंधों के विशेष संदर्भ में" है। चूँकि अज्ञेय व्यक्ति के मानस को परखनेवाले एक

सक्षम कहानीकार हैं, अतः मनोविश्लेषण की दृष्टि से उनकी कहानियों का अध्ययन करना अपेक्षित जान पड़ा। अज्ञेय की लगभग सभी कहानियों में पात्रों के मानस का विश्लेषण काफी गहराई के साथ हुआ है। इस अध्याय में मैंने उन्हीं कहानियों का जिक्र करना उचित समझा जिन कहानियों में स्त्री–पुरुष संबंधों की अभिव्यक्ति है। चूँकि अज्ञेय फ्रायड से भी कहीं न कहीं प्रभावित रहे हैं, अतः इस अध्याय में फ्रायड के सिद्धांतों के आलोक में उनकी कहानियों का विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है।

तृतीय अध्याय "अज्ञेय की कहानियों में स्त्री–पुरुष संबंधों का स्वरूप" है। स्त्री–पुरुष संबंधों के जो प्रमुख आधार स्तंभ हैं, उन्हीं के अंतर्गत् कहानियों की चर्चा की गई है। प्रेम, प्रेम के स्वरूप, प्रेम की महत्ता, दाम्पत्य–जीवन, दाम्पत्य–जीवन के मिठास और खटास के बीच उठते महत्त्वपूर्ण सवाल, तलाक, विधवा–जीवन आदि प्रसंगों को लेकर उनकी कहानियों का विश्लेषण किया गया है। अज्ञेय के स्त्री–पुरुष संबंधी जो विचार हैं, उस पर इस अध्याय में प्रमुख रूप से बल दिया गया है। साथ ही इस अध्याय में स्त्री–पुरुष संबंधों की मानसिक उलझनों को भी रेखांकित किया गया है।

मुझे अपने शोध–विषय से संबंधित पाठ्य–सामग्री के लिए कई जगहों के पुस्तकालयों में जाना पड़ा। मुझे मेरे विषय से संबंधित ज्यादा सामग्री नहीं मिल पायी। फिर भी मुझे महत्वपूर्ण आलोचकों की अज्ञेय संबंधी कुछ आलोचनाएँ अवश्य मिलीं। इन आलोचनाओं ने मुझे अज्ञेय की कहानियों को समझने की एक नई दृष्टि प्रदान की।

मेरे लघु शोध–प्रबंध के कार्य में सबसे महत्त्वपूर्ण भूमिका मेरे शोध निर्देशक डॉ. गोबिंद प्रसाद का है। उन्होंने समय–समय पर मेरा भरपूर सहयोग दिया। कभी–भी गलत दिशा में भटकने नहीं दिया। उनके सही दिशायुक्त मार्गदर्शन ने सदैव मेरे अंदर आत्म–बल का संचार किया। उन्होंने मेरी बड़ी से बड़ी समस्या का समाधान डाँटकर नहीं, वरन् हमेशा प्यार से समझाकर किया।

जहाँ तक अन्य लोगों के सहयोग का सवाल है, उसमें मेरे मित्रों की भूमिका अहम रही। आनंद, सुभाष, अनिल, अमित, अशोक, उदय, सोनल, माला, स्वाति, पूनम, सोनी और मोनी सदैव मेरे कार्य के साथ रहे। सुधीर जी, सागर जी वैभव जी और राजेश जी के सहयोग को भी नहीं भुलाया जा सकता है।

अध्याय एक

अज्ञेय की कहानी–दृष्टि

"जो कहानी केवल कहानी–भर होती है, उसे ऐसे लिखना कि वह सच जान पड़े, सुगम होता है। किन्तु जो कहानी जीवन के किसी प्रगूढ़ रहस्यमय सत्य को दिखाने के लिए लिखी जाय, उसे ऐसा रूप देना कठिन नहीं, असंभव ही है। जीवन के सत्य छिपे रहना ही पसंद करते हैं, प्रत्यक्ष नहीं होते। उन्हें दिखाना हो तो ऐसे ही साधन उपयुक्त हो सकते हैं जो प्रत्यक्ष न करे, छिपा ही रहने दें, जो छायाओं और लक्षणों के आधार पर उसका आकार विशिष्ट कर दें, और बस ––।"

–– सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन 'अज्ञेय'

"कहानी की सम्यक् परिभाषा का प्रयत्न न करते हुए मोटे तौर पर कहा जा सकता है कि कहानी एक क्षण का चित्र प्रस्तुत करती है। क्षण का अर्थ हम चाहे एक छोटा काल–खंड लगा लें, चाहे एक अल्पकालिक स्थिति, एक घटना, प्रभावी डायलॉग, एक मनोदशा, एक दृष्टि, एक बाह्य या आभ्यान्तर झाँकी, समझ का एक आकस्मिक उन्मेष, संत्रास, तनाव, प्रतिक्रिया, प्रक्रिया .... इसी प्रकार 'चित्र' का अर्थ वर्णन, निरूपण, रेखांकन, सम्पुंजन, सूचन, संकेतन, अभिव्यंजन, रंजन, प्रतीकन, द्योतन, आलोकन, रूपायन, जो चाहे लगा लें –– या इनके विभिन्न जोड़।"[1]

–– सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन 'अज्ञेय'

अज्ञेय की कहानी संबंधी परिभाषा में व्यापकत्व है। अज्ञेय ने क्षण के कई अर्थ बतलाए हैं, जो सही है। क्षण को हम काल का अत्यल्प परिणाम भी कह सकते हैं। इस काल के अत्यल्प परिणाम में वर्णित घटना–प्रसंग और दृश्य तथा पात्र और उनका चरित्र–चित्रण भी अत्यंत न्यून, सूक्ष्म और संक्षिप्त होता है। लेखक अपनी संवेदना और सूक्ष्म दृष्टि के माध्यम से इस क्षण का चित्र इस प्रकार से प्रस्तुत करता है कि वह पाठकों के मन पर अमिट छाप छोड़ देता है। क्षण का यही अंकन उन्हें अपने समकालीन कहानीकारों के बीच एक अलग पहचान देता है और उनकी कहानियों को भी कालजित बनाता है।

अज्ञेय स्वच्छंद व्यक्तित्व वाले व्यक्ति रहे हैं। इसी कारण उनकी लेखनी परंपरागत शैली को उस रूप में नहीं अपना पाती है जैसा कि वह है। उनमें कुछ नया करने का आग्रह दिखाई पड़ता है। यही आग्रह उन्हें सबसे अलग एक नयी पहचान देती है। अज्ञेय ऐसी कहानी के पक्ष में हैं, जिसके माध्यम से जीवन

[1] भूमिका, अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 7

के 'प्रगूढ़ रहस्मय सत्य' को दिखाया जा सके, पर उस तरह नहीं जैसा कि वह है। इस संबंध में उन्होंने लिखा है ––

"जो कहानी केवल कहानी–भर होती है, उसे ऐसे लिखना कि वह सच जान पड़े, सुगम होता है। किन्तु जो कहानी जीवन के किसी प्रगूढ़ रहस्मय सत्य को दिखाने के लिए लिखी जाय, उसे ऐसा रूप देना कठिन नहीं, असंभव ही है। जीवन के सत्य छिपे रहना ही पसंद करते हैं, प्रत्यक्ष नहीं होते। उन्हें दिखाना हो तो ऐसे ही साधन उपयुक्त हो सकते हैं जो प्रत्यक्ष न करे, छिपा ही रहने दें, जो छायाओं और लक्षणों के आधार पर उसका आकार विशिष्ट कर दें, और बस ....।"[1]

वास्तव में अज्ञेय के इसी अंदाज ने उन्हें श्रेष्ठ बनाया है। "कहानी–रचना के क्षेत्र में ,जहाँ अज्ञेय ने युवावस्था के आरंभ में ही प्रवेश किया, उन्होंने किसी भी देशी या विदेशी कथा लेखक को अपने आदर्श के रूप में ग्रहण नहीं किया और कहानी के रूप और शिल्प की दिशा में खुद अपने रास्ते की खोज करते रहे –– लगभग वैसे ही जैसे उन्होंने कहानी–विधा को 'अर्थवत्ता की खोज' का माध्यम बनाया। अपने आपमें यह प्रवृत्ति उनकी कहानियों की उत्कृष्टता या गुणवत्ता का प्रतिमान नहीं है; किन्तु कहानीकार के रूप में यह निश्चय ही उनकी विशिष्टता का द्योतक है।"[2]

अज्ञेय के मन में यह प्रश्न कौंधता रहा है कि "कहानियाँ आखिर बनती कैसे हैं! .... अगर ऐसे न बनकर ऐसे बनती तो कैसा रहता।"[3] उन्होंने लगभग सड़सठ कहानियाँ लिखी हैं। लगभग सभी कहानियाँ पाठक के मन पर प्रभाव

---

[1] अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 232
[2] अज्ञेय : कुछ रंग, कुछ राग – श्री लाल शुक्ल, पृष्ठ संख्या – 23
[3] अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 599

छोड़ने में सफल होती हैं। कुछ कहानियाँ तो ऐसी हैं, जो आज भी लगभग नयी हैं। निःसंदेह ऐसी कहानियों के बनने में अज्ञेय की वैसी क्षमता का असीम योगदान है, जो 'मानव–मन के सूक्ष्मतम स्तर' को पकड़ पाने में सक्षम है। "अज्ञेय की कहानियों के कारण हिन्दी कहानी–साहित्य की यह उन्नति उसकी एक महत्त्वपूर्ण अतः उल्लेखनीय उपलब्धि है। इसके अतिरिक्त अज्ञेय की कहानियों में प्रयुक्त कहानी–रचना की विविध शैलियाँ –– जिनका अज्ञेय ने पूर्ण सफलता के साथ प्रयोग किया है –– उनकी अभिजात, परिष्कृत, सहज–समर्थ, अर्थपूर्ण चित्रोपम एवं परिनिष्ठित भाषा आदि भी हमारी महनीय उपलब्धियाँ हैं।"[1]

अज्ञेय व्यक्ति के स्वतंत्र विकास के पक्षधर रहे हैं, ऐसा स्वतंत्र व्यक्तित्व कि दूसरों को भी स्वतंत्र करे। वे सर्जना के केन्द्र में व्यक्ति को रखते हैं और यहीं से उनकी सर्जना–शक्ति का विकास भी होता है। वास्तव में "अज्ञेय समाज का अध्ययन व्यक्ति के माध्यम से करते हैं न कि व्यक्ति का अध्ययन समाज के माध्यम से।"[2]

उन्होंने कहानी को एक क्षण का चित्र माना है। "यह 'क्षण' का 'चित्र' और उस 'चित्र' की प्रस्तुति जिस निश्चय की भंगिमा से जुड़ी हुई है, वह निश्चय अज्ञेय का व्यष्टि–चिंतन है। इसी के माध्यम से वे अपनी रचनाओं का एक विशिष्ट बोध तैयार करते हैं। परिणामस्वरूप उनकी कहानियाँ एक ऐसे संसार में चली जाती हैं, जो बाह्य जगत को भी आंतरिक जगत के आलोक में देखता है अर्थात् उस संवेदन के बल पर जो व्यक्ति के 'व्यक्ति' होने की संज्ञा निश्चित करता है।"[3]

---

[1] अज्ञेय का कथा–साहित्य, ओम प्रभाकर, पृष्ठ संख्या – 156
[2] अज्ञेय और आधुनिक रचना की समस्या, रामस्वरूप चतुर्वेदी, पृष्ठ संख्या – 119
[3] हिन्दी कहानी का मूल्यांकन, कांता (अरोड़ा) मेंहदीरत्ता, पृष्ठ संख्या – 51

"अज्ञेय की प्रायः समस्त कहानियों में व्यक्ति–चरित्र ही प्रमुखरूपेण चित्रित है। इसका एक कारण यह है कि वे मूलतः कवि की दृष्टि रखते हैं; किसी समाजालोचक, सुधारक की वृत्तियाँ उनमें नहीं हैं। अतः मनुष्य का स्वयं में एक पूर्ण इकाई के रूप में जितना सफल और कलात्मक अंकन अज्ञेय ने अपनी कहानियों में किया है, संभवतः आधुनिक हिन्दी कथा–साहित्य में अन्यत्र दुर्लभ है। कहीं–कहीं उनकी यह मौलिक कवि–प्रतिभा इतनी उग्र और अन्तःप्रवेशकारी हो जाती है कि मानव–मन के अनेक गहन से गहन स्तर स्वतः उद्‌घाटित हो जाते हैं।"[1]

अज्ञेय के पास कवि–दृष्टि है। इसी कवि–दृष्टि के कारण अज्ञेय व्यक्ति के मानस की जटिलताओं को पकड़ पाने में समर्थ रहे हैं और इन जटिलताओं की प्रस्तुति भी उनकी कहानियों में सशक्त ढंग से हुई है। वास्तव में कवि की दृष्टि स्थूल से सूक्ष्म चीजों की ओर जाती है। वह सूक्ष्म से सूक्ष्म चीजों को ज्यादा प्रभावी ढंग से अभिव्यक्त कर सकता है। चूँकि कवि के पास गहरी अनुभूति होती है, अतः वह मानव के अंतर्मन के अंतर्द्वन्द्व को परत दर परत खोल सकता है। कहानी–लेखक के पास यदि यह दृष्टि हो तो वह और भी अच्छा कहानीकार हो सकता है। अज्ञेय इस बात को स्वीकार करते हैं। उनकी मान्यता है ––

"अगर मानवीय संवेदन पर बल देना ठीक है, तो मेरे लिए यह मानना असंभव हो जाता है कि कवि–दृष्टि कहानी–लेखक में बाधक होती है, या कि कवि होने के नाते ही घटिया कहानी–लेखक होता है। बल्कि यही मानना अधिक संगत दीखता है कि कहानीकार के अन्य गुणों से संपन्न व्यक्ति में कवि–दृष्टि भी होने पर वह अधिक महत्त्वपूर्ण कहानी–लेखक हो सकता है। अधिक

[1] अज्ञेय का कथा–साहित्य, ओम प्रभाकर, पृष्ठ संख्या – 134

महत्त्वपूर्ण –– भले ही तात्कालिक दृष्टि से अधिक सफल या प्रभावी नहीं। और अधिक टिकाऊ –– कालजयित्व की दीर्घतर अर्हता लिए हुए।"[1]

अज्ञेय ने कहानी–लेखक के लिए कवि–दृष्टि को महत्त्वपूर्ण माना है। वे कवि–दृष्टि से पूर्ण कहानी को कालजित मानते हैं, भले ही वह अपने समय में महत्त्वपूर्ण न रहा हो। चूँकि अज्ञेय भी एक कवि हैं, अतः उनकी कहानियों में भी कवि–दृष्टि विद्यमान है। कवि–दृष्टि होने के कारण ही उनकी कहानियाँ इतनी अच्छी बन गयी हैं कि वह पाठक के मन पर अद्‌भुत प्रभाव छोड़ती हैं। उनकी कहानियों की प्रासंगिकता आज भी है।

"अज्ञेय का कवि होना उनकी कहानियों के लिए वरदान ही सिद्ध हुआ है। उनकी सबसे मार्मिक कहानियाँ वही हैं, जिनमें उनकी कवि–दृष्टि प्रतिफलित हुई है। आरंभिक कहानियों को छोड़ दें तो उनका कवित्व उन्हें मितकथन और संकेन्द्रण की ओर ही ले जाता है, भावुकता की ओर नहीं। निश्चय ही उनकी कहानियों के आंतरिक संसार में कुछ टिकाऊ तत्व हैं, जो बाहरी रूप–रंग, भाषा–शब्दावली आदि के पुराने पड़ जाने के बावजूद आज भी पाठक के मन को आंदोलित कर सकने में सक्षम हैं।"[2]

अज्ञेय ने कवि द्वारा देखे गये यथार्थ को ही प्रत्यक्ष माना है। उन्होंने इस संबंध में लिखा है :––

"यह बात तो तब भी टिकेगी अगर यथार्थ इकहरा ही होता हो। मैं पहले ही कह आया कि वह वैसा कभी नहीं होता और उसकी एक ही तह या

---

[1] भूमिका, अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 12
[2] अज्ञेय, रमेशचन्द्र शाह, पृष्ठ संख्या – 41

सतह को देखना ही उसे अयथार्थ कर देना है। मैं उसे बहुस्तरीय, जटिल और गुँथीला भी मानता हूँ, और समझता हूँ कि इस के अनुरूप उसका बहुविध दर्शन या साक्षात्कार भी संभव है। और मैं मानता हूँ कि ठीक यहीं कवि का योग हो सकता है। बल्कि कवि–दृष्टि ही ऐसा साक्षात्कार कर सकती है –– कवि–दृष्टि से देखा गया यथार्थ ही प्रत्यक्ष होता है।''[1]

अज्ञेय की यह मान्यता कि कहानी–लेखक के पास कवि–दृष्टि होना, कहानीकार को हानि के बदले लाभ ही पहुँचाती है–– तर्कसंगत मालूम पड़ती है। वास्तव में कवि के पास एक सूक्ष्म दृष्टि होती है, जिसके माध्यम से वह गहन से गहन चीजों को आसानी से परख सकता है और उसे प्रभावपूर्ण ढंग से प्रस्तुत भी कर सकता है। इसके अतिरिक्त अज्ञेय ने एक तथ्य की ओर ध्यान दिया है, जो ज्यादा महत्त्वपूर्ण है। उन्होंने स्वीकार किया है कि केवल कवि होने से कोई महान कहानीकार नहीं हो जाता है, अपितु उस कवि के पास कहानीकार संबंधी गुण भी होने चाहिए। इन सभी बातों का निचोड़ यह है कि एक अच्छे कहानीकार के पास यदि कवि–दृष्टि भी हो तो वह सोने पर सुहागा का कार्य करेगी।

अज्ञेय ने यथार्थ के बाह्य और आंतरिक स्वरूप को लेकर चर्चा की है। उन्होंने इस संबंध में लिखा हैः––

"यथार्थ की पकड़ की इस शब्द–बहुल चर्चा में, लोग दो चीजें मानकर चलते जान पड़ते हैं जो दोनों ही प्रश्नाधीन हैंः पहली यह कि 'यथार्थ' सब 'बाहर' होता है, सतह पर होता है, दूसरी यह कि यह इकहरा या एकस्तरीय होता है। जो दिखता नहीं है, या थोड़ा और आगे बढ़कर कह लें, कि जो गोचर नहीं है, वह

[1] भूमिका, अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 14

यथार्थ नहीं है, यह एक नये प्रकार का अंधापन है जिसे यथार्थ–बोध का नाम दिया जा रहा है। और अगर यथार्थ के वास्तव में अनेक स्तर होते हैं, तो केवल एक बाहरी खोल को देखने तक सीमित रहने में कौन–सी बहादुरी या विशिष्ट प्रतिभा है।"[1]

अज्ञेय बाह्य यथार्थ की जगह आंतरिक यथार्थ की बात करते हैं। बाह्य यथार्थ स्थूल एवं आंतरिक यथार्थ सूक्ष्म होता है। सूक्ष्म यथार्थ में लेखक के भाव भी निहित होते हैं। यथार्थ का हूबहू चित्रण करना व्यर्थ होता है। कहानी में यदि यथार्थ सीधे आता है तो कहानी का कहानीपन समाप्त हो जाता है। वास्तव में कहानी में यथार्थ का आभास मात्र होता है। कहानीकार की सूक्ष्म दृष्टि भी उस यथार्थ में निहित होती है। ऐसा होने पर ही कहानी अच्छी बन पाती है। प्रेमचंद ने इस संबंध में लिखा है ––

"अगर हम यथार्थ को हूबहू खींचकर रख दें, तो उसमें कला कहाँ है? कला केवल यथार्थ की नकल का नाम ही है।"[2]

"कला दिखती तो यथार्थ है, पर यथार्थ होती नहीं। उसकी खूबी यही है कि वह यथार्थ न होते हुए भी यथार्थ मालूम हो। "[3]

अज्ञेय ने माना है कि कला में यथार्थ की मौजूदगी संवेदना के मार्फत आती है। उन्होंने इस संबंध में लिखा है ––

"कला में यथार्थ हमेशा संवेदना से छनकर आता है और उसमें यह दीखना भी चाहिए कि वह संवेदना से छनकर आया है। कला के यथार्थ में विषयी द्वारा उसके स्वायत्त किए गये होने की गूँज होती है। उस गूँज के सहारे ही

---

[1] प्रतिवेदन, मेरी प्रिय कहानियाँ, अज्ञेय, पृष्ठ संख्या – 8
[2] साहित्य का उद्देश्य, प्रेमचंद, पृष्ठ संख्या – 34
[3] वही, पृष्ठ संख्या – 35

हम यथार्थ के निरे बयान से रचना की अलग पहचान करते हैं, क्योंकि हम परख करते हैं कि वह केवल बाहर का यथार्थ है या कि रचनाकार ने उसे आत्मसात् कर ही लिया है। मेरे लिए रचना का यही इष्ट –– या कि कह लिया जाये आदर्श –– रहा है : उसमें वस्तु–सत्य का, बाहरी यथार्थ का, खरापन भी होना चाहिए और साथ ही आत्म–सम्बोध की, आभ्यन्तर यथार्थ की अर्थवत्ता भी होनी चाहिए।"[1]

अज्ञेय की दृष्टि से यह स्पष्ट हो जाता है कि कहानी में बाह्य यथार्थ की सत्यता जरूरी है। लेकिन वह यथार्थ कहानी में सीधे–सीधे नहीं आना चाहिए। यदि यथार्थ सीधे–सीधे आता है तो कहानी का कहानीपन समाप्त हो जाता है। वह यथार्थ आत्मानूभूति से छनकर आये, तो अधिक अच्छा है। साथ–ही–साथ आंतरिक यथार्थ भी उसमें निहित होना चाहिए। उन्होंने कला में आंतरिक यथार्थ की अर्थवत्ता का होना भी आवश्यक माना है। अज्ञेय के यहाँ कला की रचना का संबंध अर्थवत्ता से जुड़ा है। इसीलिए वे अर्थवत्ता की खोज वस्तु यथार्थ में नहीं, वरन् विषयीगत यथार्थ में ही मानते हैं। वे स्पष्ट कहते हैं ––

"मैं मानता ही नहीं, जानता हूँ कि यथार्थ इकहरा या सपाट या एक–स्तरीय नहीं होता। मैं इस से आगे जाकर यह भी कह सकता हूँ कि कला के क्षेत्र में एक विशेष आशय में 'यथार्थ' अर्थहीन होता है, हमेशा अर्थहीन होता है : क्योंकि जिसे हम वस्तु यथार्थ या विषयी–निरपेक्ष यथार्थ या आब्जेक्टिव रिएलिटी कहते या कह सकते हैं, उसमें फिर अर्थवत्ता का प्रश्न ही कहाँ रहता है जबकि अर्थ अनिवार्यतः अर्थ की पहचान करनेवाले के, विषयी के, साथ बँधा है ? केवल सब्जेक्टिव

[1] भूमिका, अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 12

यथार्थ में ही अर्थवत्ता का प्रश्न उठ सकता है : विषयीगत यथार्थ ही कला का यथार्थ होता है और उसी में अर्थ हो सकता है और इसलिए अर्थ की खोज हो सकती है।"[1]

वास्तव में किसी कहानीकार या कलाकार का समाज में उसके समाजीकरण के दौरान ही उसकी एक दृष्टि बन जाती है। वह अपनी इसी दृष्टि से सारी चीजों को देखता और परखता है। जब वह वस्तु जगत की किसी घटनाओं को अर्थ देता है, तो उसमें वह भी उपस्थित होता है। अज्ञेय की दृष्टि में यहीं कहानीकार या कलाकार विषयी हो जाता है। स्वाभाविक है, यहीं पर विषयीगत यथार्थ में अर्थवत्ता की खोज होगी। अज्ञेय ने अर्थवत्ता की खोज के साथ–साथ कहानी के सम्प्रेषण पर भी जोर दिया है। उन्होंने इसी आधार पर कहानी की सफलता या असफलता का मामला उठाया है। उन्होंने इस संबंध में लिखा है ––

"मैंने हमेशा सम्प्रेषण की कला को बुनियादी महत्त्व दिया है। और सम्प्रेषण अथवा सम्प्रेषणीयता का अंतिम निर्णायक लेखक नहीं हो सकता है, पाठक अथवा सामाजिक ही हो सकता है। लेखक अपनी सफलता इसमें तो देख सकता है कि 'जो मैं पकड़ना चाहता था वह मैं पकड़ पाया या नहीं'; पर स्पष्ट है कि कहानी की सफलता यहाँ इस अर्थ में लेखक की सफलता से अलग है कि कहानी की सफलता की कसौटी के लिए हम यह पूछना चाहेंगे कि जो कुछ भी लेखक ने पाना चाहा या पाया, उसे दूसरे तक –– सामाजिक तक –– पहुँचाने में वह कहाँ तक सफल हुआ ? (और यह तो है कि पहुँचाया जा कर वह सामाजिक को कितना मूल्यवान लगा !) "[2]

---

[1] प्रतिवेदन, मेरी प्रिय कहानियाँ – अज्ञेय, पृष्ठ संख्या – 8
[2] वही, पृष्ठ संख्या – 5

अज्ञेय ने सम्प्रेषण संबंधी जो बातें बतलायी हैं, वह अपने आप में व्यापकत्व है। वास्तव में रचनाओं का अंतिम द्वार पाठक ही होता है। वही रचनाएँ सफल हो पाती हैं, जो पाठक को अथवा सामाजिक को आसानी से समझ में आ जाये। साथ–ही–साथ उस पर रचनाओं का प्रभाव भी स्थापित हो जाये। यदि सम्प्रेषण की प्रक्रिया सही ढंग से नहीं होती है तो वह असफल हो जाती है। अज्ञेय का यह मानना बिलकुल सही है कि "रचना का पहला धर्म अभिव्यक्ति नहीं, सम्प्रेषण है। इस नाते प्रत्येक रचना स्वयं अपने लिए वह स्थिति उत्पन्न करती है जिसमें संप्रेषण हो –– और अगर नहीं करती तो असफल होती है।"[1]

अज्ञेय का उद्देश्य केवल अभिव्यक्ति नहीं रहा है। रचना–कर्म में उनके लिए अर्थवत्ता की खोज और संप्रेषण का रहा है। जिस माध्यम से वे इस चीज को सम्प्रेषित नहीं कर पाये, उसे उन्होंने त्याग दिया। उन्होंने इस चीज का उल्लेख भी किया है ––

"अर्थवत्ता में एक तरफ वस्तु की सही और मजबूत पकड़ पर और दूसरी तरफ उसके सही संप्रेषण पर मेरा समान बल रहा है। यानी खोज निरंतर यथार्थ की व्याप्ति और गहराई को समझने और संप्रेषण प्रक्रिया को अधिक समर्थ बनाने की रही है। जो रास्ता इस खोज में मुझे और आगे ले जाता नहीं जान पड़ा है, चाहे इसलिए कि मेरे लिए वह दुर्गम है, उसे छोड़कर मैंने अपनी यात्रा के लिए दूसरा पथ बनाना शुरू कर दिया है; और पथ बनाते हुए भी अपने पाठक अथवा समाज को साथ लिए चलने या लिए रहने का प्रयत्न करता रहा हूँ क्योंकि असल बात तो

---

[1] भूमिका, अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 6

समाज को ही साथ ले चलने की है, सम्प्रेषण की है, स्वयं कहीं पहुँच जाने–भर की नहीं; अभिव्यक्ति मात्र की नहीं।''[1]

अज्ञेय ने कहानी संबंधी बहुत–सी महत्त्वपूर्ण बातों को बतलाया है। निश्चित ही ये बातें किसी–भी कहानीकार के लिए आदर्श हो सकती हैं। लेकिन एक बात रोचक है कि अज्ञेय ने इतनी महत्त्वपूर्ण कहानियाँ लिखकर भी कहानी–विधा से मुख क्यों मोड़ लिया ? इस बात का उन्होंने कई जगहों पर संकेत दिया है; जिसका उनकी कहानी–दृष्टि के संदर्भ में जिक्र करना और उसकी सार्थकता को समझना बेहद जरूरी है। कहानी से अपनी दूरी के बारे में उन्होंने लिखा है ––

''मेरे लिए रचना–कर्म हमेशा अर्थवत्ता की खोज से जुड़ा रहा है, और यही खोज मुझे कहानी से दूर ले गयी है क्योंकि कहानी को मैंने उसके लिए नाकाफी पाया है।''[2]

'' . . . कहानी इसलिए नाकाफी थी कि उसमें मनोजगत् की –– मनोवैज्ञानिक यथार्थ की –– कोई एक गाँठ, एक संधि, एक दरार तो एकाएक तीखे प्रकाश से आलोकित कर दी जा सकती थी, पर मनोदेश का कोई नक्शा नहीं प्रस्तुत किया जा सकता था; और मनोवैज्ञानिक यथार्थ अनिवार्यतः गहरे जाने वाले को भी विस्तीर्ण मनोभूमि की याद दिलाता जाता है।''[3]

वे कहानी को एक क्षण का चित्र मानते हैं। इसलिए उनकी दृष्टि में कहानी के सत्य में उतनी व्याप्ति नहीं होती। मनोवैज्ञानिक यथार्थ की ओर उन्मुख अज्ञेय को इसी कारण कहानी–विधा अयथेष्ट जान पड़ती है, क्योंकि कहानी में

---

[1] भूमिका, अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 7
[2] प्रतिवेदन, मेरी प्रिय कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 6
[3] भूमिका, लौटती पगडंडियाँ, पृष्ठ संख्या – 6

मनोवैज्ञानिक यथार्थ की कोई एक दरार तो एकाएक तीखे प्रकाश से आलोकित कर दी जा सकती है, पर मनोदशा का कोई नक्शा नहीं प्रस्तुत किया जा सकता। मनोदशा के नक्शे का विस्तार होने लगते ही कहानी का फोकस बिखर जाता है। ऐसा होना स्वाभाविक ही है क्योंकि कहानी में एक क्षण का चित्र होता है। यदि उसे विस्तार दिया जाने लगेगा तो वह कहानी नहीं रह पायेगी। कहानी में क्षण के विस्तार और उससे आलोकित यथार्थ के संबंध में अधिक विस्तार से बताते हुए वे बाह्य अथवा सामाजिक यथार्थ से होते हुए आभ्यांतर अथवा मनोवैज्ञानिक यथार्थ रूपों की ओर मुड़ जाते हैं। इस संदर्भ में वे स्वयं कहते हैं ––

"मेरी जिज्ञासा और दिलचस्पी आदर्शपरक रचना से बढ़ती हुई क्रमशः यथार्थोन्मुख होती गयी –– और भी स्पष्ट यह कि जिस यथार्थ की ओर मैं अधिकाधिक बढ़ा वह 'बाह्य' या 'भौतिक' या 'सामाजिक' यथार्थ से पहले आभ्यन्तर, मानस अथवा मनोवैज्ञानिक यथार्थ था। अधिक स्पष्ट होने के साथ–साथ ऐसा भी नहीं है कि यह बात कम सत्य हो गयी होगी। पर मनोवैज्ञानिक यथार्थ का कहानी से कोई असामंजस्य तो नहीं है, और इस बात के प्रमाण के लिए मेरी ही कहानियों से उदाहरण लिए जा सकते हैं; फिर कहानी से विमुख होते जाने का कारण यह क्यों हुआ ?"[1]

अज्ञेय की मान्यता है कि कहानी में मनोवैज्ञानिक यथार्थ का वर्णन संभव है। साथ–ही उन्होंने इसके उदाहरण के लिए अपनी कहानी की बात कही है। मगर उन्होंने इस चीज को भी स्वीकार किया है कि मनोवैज्ञानिक यथार्थ के लिए कहानी का व्यास काफी नहीं है ––

[1] भूमिका, लौटती पगडंडियाँ, पृष्ठ संख्या – 6

"मनोवैज्ञानिक यथार्थ की ओर उन्मुख होने पर कहानी विधा का यथेष्ट न जान पड़ना भी स्वाभाविक है।"[1]

अज्ञेय ने मनोवैज्ञानिक यथार्थ के लिए कहानी से ज्यादा अच्छा उपन्यास को माना है। मगर यहाँ भी बात बनती नजर नहीं आती है। उन्होंने इस संबंध में लिखा है --

"मनोवैज्ञानिक यथार्थ का संपूर्ण चित्र खींचना चाहे तो एक भी उपन्यास पूरा नहीं किया जा सकता -- बल्कि एक ही चरित्र का भी पूरा मनश्चित्र नहीं प्रस्तुत किया जा सकता! जो हो; इस बात का मैंने स्पष्ट और तीव्र अनुभव किया कि कहानी का व्यास काफी नहीं है।"[2]

कहानी–विधा में मनोवैज्ञानिक यथार्थ की प्रस्तुति सही ढंग से नहीं कर पाने को अज्ञेय ने कहानी से अपना मुख मोड़ने का कारण बतलाया है। पूर्ण रूपेण इस चीज को सही नहीं ठहराया जा सकता क्योंकि वे उपन्यास में भी मनोवैज्ञानिक यथार्थ का संपूर्ण चित्र खींच पाना असंभव मानते है। वे इस यथार्थ का वर्णन कर पाने में सक्षम थे और उन्होंने इसका वर्णन अपनी कहानियों में सशक्त ढंग से किया भी है। लेकिन समस्या अवश्य हो रही होगी, इसीलिए वे उपन्यास की ओर मुड़े होंगे। कहानी को छोड़ने में कुछ हद तक यह कारण रहा होगा। ठीक–ठीक इसी कारण को जिम्मेवार ठहराना सही प्रतीत नहीं होता है। कहानी–विधा को छोड़ने के उन्होंने और भी कई कारण बतलाएँ हैं, जिन्हें देखना आवश्यक और उपयोगी भी होगा। उन्होंने लेखन–कार्य को 'अनिवार्यता' का प्रश्न बतलाते हुए कहा है --

---

[1] भुमिका, अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 6
[2] वही, पृष्ठ संख्या – 6

"लिखना एक 'अनिवार्यता' होती है, इस लिए यों तो इतना 'कारण' काफी है कि जब अनिवार्यता नहीं अनुभव की तो नहीं लिखा;"[1]

अज्ञेय ने जिस 'अनिवार्यता' का प्रश्न उठाया है, वह एकदम सही है। साहित्य में लिखने के लिए बहुत सारी विधाएँ हैं। यदि लेखक बहुत–सी विधाओं में लिखना चाहता है तो कुछ विधाएँ तो छूटेंगी ही। अज्ञेय उपन्यास की ओर अग्रसर हुए तो कहानी–विधा छूटती चली गयी। ऐसे भी उन्होंने अनेक कहानियाँ लिखीं हैं। कहानी–विधा में आने का उनका कुछ खास मकसद ही था। इस संबंध में उन्होंने लिखा है ––

"आरंभ की कहानियों में क्रांति को आगे बढ़ाने का लक्ष्य था, जो कि –– मानता हूँ ––– साहित्यिकेतर लक्ष्य है, तब यहाँ यह मानने में कोई संकोच नहीं है कि अब कुछ खास चीजें न लिखने का कारण भी उतना ही असाहित्यिक है।"[2]

अज्ञेय ने माना है कि क्रांति को आगे बढ़ाने के लिए ही कहानी–विधा को अपनाया। यह बात उतनी ही सच प्रतीत होती है, जितनी कि यह बात कि मनोवैज्ञानिक यथार्थ का वर्णन करने के लिए वे उपन्यास की ओर मुड़ते चले गए।

उन्होंने कहानी–विधा को छोड़ने का एक और महत्त्वपूर्ण कारण कहानीकारों और कहानी पत्रिकाओं की अधिकता को बतलाया है। उन्होंने इस संबंध में लिखा है ––

---

[1] भूमिका, लौटती पगडंडियाँ, पृष्ठ संख्या – 5
[2] वही, पृष्ठ संख्या – 7

"अगर कथाकार होने के योग्य होते न होते मैं कहानी के प्रति उदासीन भी हो गया तो क्या हुआ! मेरी तो तरक्की ही हुई : पाठक का हर्ज होने का सवाल ही नहीं उठा क्योंकि जब तक मैं उस मंजिल पर पहुँचा तब तक कहानीकारों की कोई कमी नहीं रही थी और कहानी की पत्रिकाएँ भी अनेक निकलने लगी थीं।"[1]

वास्तव में अज्ञेय को लगा होगा कि कहानीकारों की संख्या बढ़ रही है। संभव है कि उन्हें यह भी लगा होगा कि पाठक–गण की रूचियाँ भी घट रही हैं। रूचियाँ कायम होंगी भी तो कहानीकार उन्हें अपनी ओर आकर्षित करने के लिए नये–नये हथकंडे अपना रहे होंगे। अज्ञेय ने इस संबंध में जो कारण बतलाएँ हैं, वे समझने योग्य हैं ––

"कहानीकार और कहानी–पत्रिकाओं की बहुतायत ने प्रतियोगिता और अहमहमिका का जो वातावरण प्रस्तुत कर दिया उसमें कहानियाँ लिखता भी तो सीधे संग्रह छापने तक के लिए रोक रखता –– और कहानियों को जोड़–जोड़ कर ही रखना हो तो लंबी कथा–रचना का आकर्षण और बढ़ जाता है! इस प्रतियोगी भाव ने कुल मिलाकर कहानी का काफी अहित किया है। शिल्प की सफाई और भाषा की कसावट जहाँ–तहाँ कुछ बढ़ी है तो उस के साथ इतने झूठे 'सिद्धांत' और बोदे दावे भी सामने आये हैं कि पाठक की तो बात क्या, स्वयं कहानी–लेखक भी चकरा गया है !" [2]

अज्ञेय के द्वारा कहानी–विधा के छोड़ने संबंधी दिये गए कारण साहित्य–जगत में चल रहे प्रतिस्पर्द्धा के अनुसार एकदम सही है। "एक और

---

[1] भूमिका, लौटती पगडंडियाँ, पृष्ठ संख्या – 11
[2] वही,, पृष्ठ संख्या – 12

महत्त्वपूर्ण कारण लेखक अपनी भूमिका में बताता है। उन्होंने स्वीकार किया है कि देश–विभाजन से संबंधित कहानियों को छोड़कर उनकी अधिकांश कहानियाँ न्यूनाधिक मात्रा में आत्मकथा–मूलक रही हैं। वे 'आत्मकथा नहीं थीं पर अपने जीवनानुभवों का उपयोग उनके लिए अवश्य किया गया था।' अब आगे चूँकि लेखक 'भोक्तृत्व से उबरकर कर्तृत्व प्राप्त करने' की दिशा में अग्रसर होता गया है, अतः कहानी उससे छूटती गई है। यह शायद सबसे अच्छी व्याख्या है।"[1]

अज्ञेय के द्वारा कहानी–विधा को छोड़ने का जो भी कारण रहा हो, वह उनकी अपनी विवशता है। कहानी के रूप उनकी कहानियाँ सफल रही हैं। कहानीकार के रूप में उन्हें एक नयी पहचान मिली है। कहानीकार होने के साथ–साथ चूँकि वे कवि भी थे, अतः उनकी कवि–दृष्टि का लाभ उनके कहानीकार व्यक्तित्व को अवश्य मिला है। उनकी कवि–दृष्टि ने उनकी कहानियों को संवेदना का एक नया धरातल अवश्य दिया है। इस धरातल पर उन्होंने मानव–मन के अंतर्मन के अंतर्द्वन्द्व को सही ढंग से उभारा है। उनकी कहानियों में उनकी तन्मयता स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है। कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि कहानी के संबंध में उनकी दृष्ठि व्यापक और परिपक्व है। व्यापक इस मामले में कि वह सूक्ष्म–से–सूक्ष्म चीजों का रेखांकन करने में सक्षम है तथा परिपक्व इस संदर्भ में कि वह कहानी का कथानक, शिल्प और उसकी भाषा का सही चुनाव करने में समर्थ है। यही चीजें उनकी कहानियों को कालजित बनाती हैं।

अज्ञेय ने कहानी के नयेपन और पुरानेपन के बारे में चर्चा की है। उन्होंने बताया है कि कहानी क्यों जल्दी पुरानी पड़ जाती है। इस बारे में उन्होंने

---

[1] अज्ञेय : सृजन और संघर्ष, राजकमल राय, पृष्ठ संख्या – 152

लिखा है कि, "इसीलिए कहानी सब से जल्दी पुरानी पड़ती है। फिर कहानियों में वे या वैसी कहानियाँ और भी जल्दी पुरानी पड़ती हैं जो अपने समय के समाज के बाह्य यथार्थ से बँधी होती हैं। ऐसी कहानियाँ जब तक नयी होती हैं तब सब से नयी दिखती हैं; उनकी तात्कालिक सम्पृक्ति और 'रेलेवैंस' सब से अधिक जान पड़ती है, पर जब नयेपन से हटती हैं या नवतर के समान्तर आती हैं, तब उतनी ही त्वरा से उन का नयापन धुँधला पड़ जाता है।"[1]

यह स्वाभाविक ही है कि जो कहानी अपने समय के बाह्य यथार्थ से जुड़ी रहेगी, वह डेटेड होंगी ही। अज्ञेय ने स्पष्ट रूप से इस चीज को माना है कि "कहानी सबसे जल्दी डेटेड हो गई होगी और कहानी में वे कहानियाँ और अधिक जो कि अपने समय के समाज, जीवन और उसके लोकाचारों–मुहावरों से बँधी होंगी।"[2]

चूँकि समाज की परिस्थितियाँ हमेशा एक सी नहीं रहती हैं। अतः अपने समय की परिस्थितियों से बँधी हुई कहानियों का पुराना पड़ जाना स्वाभाविक ही है। अज्ञेय ने कहानी में हमेशा नयेपन बने रहने के लिए जो कारण बतलाएँ हैं, वे इस प्रकार हैं ---

"मेरी धारणा है कि हम पायेंगे जो कि कहानियाँ जल्दी पुरानी नहीं होती हैं, या जो पुरानी हो कर भी नयी बनी रहीं हैं; या हो गई हैं, उनमें रचनाकार की दृष्टि सामाजिक यथार्थ की परिधि में न बँधी रह कर मानवीय यथार्थ पर केन्द्रित रही होगी; उनका आग्रह 'विषयगत' यथार्थ का न हो कर उस यथार्थ का

---

[1] प्रतिवेदन, मेरी प्रिय कहानियाँ – अज्ञेय, पृष्ठ संख्या – 10
[2] वही, पृष्ठ संख्या – 10

रहा होगा जो विषयी और विषयी के आपसी व्यवहार में लक्षित या व्यंजित होता है और वहीं से फैलकर सामाजिक रूप लेता है –– यानी सामाजिक होकर भी अन्तर्विषयी बना रहता है : इंटर–सबजेक्टिव होता है; आब्जेक्टिव नहीं होता।''[1]

अज्ञेय ने कहानी के पुरानी पड़ जाने के बाद भी आनेवाले समय में उसके द्वारा नई अर्थवत्ता ग्रहण कर लेने के जो कारण बतलाएँ हैं, वे सही प्रतीत होते हैं। वास्तव में उनकी लेखनी का आधार अर्थवत्ता की खोज रही है। इसी अर्थवत्ता की खोज के कारण वे कहानी – विधा से दूर चले गये। कहानी – विधा को छोड़ने के पीछे यह कारण कभी नहीं रहा कि वे अच्छी कहानियाँ नहीं लिख रहे थे। वे अच्छी कहानियाँ लिख रहे थे और उन्होंने लगभग सड़सठ कहानियाँ लिखी। परिमाण की दृष्टि से उनका कहानी लेखन कम नहीं कहा जा सकता। सभी नहीं तो अधिकांश कहानियाँ स्वयं सिद्ध करती हैं कि वे कितने सशक्त ही नहीं सफल कहानीकार भी थे। आनेवाले समय में भी अज्ञेय एक अलग पहचान के साथ कहानीकारों के बीच अग्रणी बने रहेंगे।

---

[1] प्रतिवेदन, मेरी प्रिय कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 11

अध्याय दो

अज्ञेय की कहानियों में मनोविश्लेषण : स्त्री–पुरुष संबंधों के विशेष संदर्भ में

"''' मेरी जिज्ञासा और दिलचस्पी आदर्शपरक रचना से बढ़ती हुई क्रमशः यथार्थोन्मुख होती गयी —— और भी स्पष्ट यह कि जिस यथार्थ की ओर मैं अधिकाधिक बढ़ा वह 'बाह्य' या 'भौतिक' या 'सामाजिक' यथार्थ से पहले आभ्यान्तर, मानस, अथवा मनोवैज्ञानिक यथार्थ था। अधिक स्पष्ट होने के साथ–साथ ऐसा भी नहीं है कि यह बात कम सत्य हो गयी होगी। पर मनोवैज्ञानिक यथार्थ का कहानी से कोई असामंजस्य तो नहीं है, और इस बात के प्रमाण के लिए मेरी ही कहानियों से उदाहरण लिए जा सकते हैं।"

—— सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन 'अज्ञेय'

अज्ञेय एक मँजे और सधे हुए कहानीकार हैं। उन्होंने लगभग 67 कहानियाँ लिखी हैं। उनकी समस्त कहानियों का संकलन 'अज्ञेय की सम्पूर्ण कहानियाँ' के नाम से प्रकाशित हुआ है। इनकी कहानियों में मनोवैज्ञानिक तथ्य भरे पड़े हैं। चूँकि उनकी दृष्टि व्यक्ति के मानस के गूढ़तम बिन्दुओं की ओर जाती है, अतः मानस को उद्वेलित करनेवाली ये जटिलताएँ भाषिक प्रतिभा की नई भंगिमाओं के माध्यम से सशक्त ढंग से पाठक समुदाय के सामने आती हैं। अज्ञेय ने काफी सहजता के साथ व्यक्ति के मानस को परखा है और उसे अपनी कहानियों में उकेरा भी है। किन्तु इस आधार पर यह कभी–भी नहीं कहा जा सकता कि उन्होंने किसी विशिष्ट मनोवैज्ञानिक मान्यता की स्थापना हेतु किसी कहानी की रचना की हो। यह बात सही है कि उन्होंने मनोवैज्ञानिक यथार्थ को अपनी कहानियों में अपनाया। इस संबंध में उन्होंने स्वयं लिखा है––

T H - 1163 2

"···· मेरी जिज्ञासा और दिलचस्पी आदर्शपरक रचना से बढ़ती हुई क्रमशः यथार्थोन्मुख होती गयी –– और भी स्पष्ट यह कि जिस यथार्थ की ओर मैं अधिकाधिक बढ़ा वह 'बाह्य' या 'भौतिक' या 'सामाजिक' यथार्थ से पहले आभ्यांतर, मानस अथवा मनोवैज्ञानिक यथार्थ था। अधिक स्पष्ट होने के साथ–साथ ऐसा भी नहीं है कि यह बात कम सत्य हो गयी होगी। पर मनोवैज्ञानिक यथार्थ का कहानी से कोई असामंजस्य तो नहीं है, और इस बात के प्रमाण के लिए मेरी ही कहानियों से उदाहरण लिए जा सकते हैं।"[1]

अज्ञेय की कहानियों में यह यथार्थ सीधे–सीधे नहीं आया है, वरन् यह कहानियों के भीतर से फूटता नजर आता है। अधिक स्पष्ट शब्दों में कहना

[1] भूमिका, अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 18

Jawaharlal Nehru University Library

हो तो वह जीवन का अंग बनकर सामने आया है। इसे कहानीकार और कहानी दोनों के लिए एक महती उपलब्धि कहा जा सकता है।

"असल में जो भी कोई कहानीकार मानवीय मन को गहराई से खोलना चाहता है, मनुष्य की प्रवृत्तियों और संस्कारों के द्वन्द्वात्मक संबंधों की जाँच–पड़ताल करना चाहता है, उसके चरित्र के मूल श्रोतों की छानबीन करना चाहता है या आत्मान्वेषण की प्रक्रिया से गुजरते हुए 'आत्म' की सही पहचान करना चाहता है, मनोवैज्ञानिक तथ्यों को कहानी के माध्यम से प्रवृत्त करने के लिए बाध्य होता है।"[2] एक कहानीकार होने के नाते अज्ञेय ने यही काम किया है। उन्होंने अपनी कहानियों में व्यक्ति और समाज के संबंधों को व्यक्ति के मानस की हलचलों के माध्यम से प्रस्तुत किया है।

अज्ञेय की कहानियों में मनोविज्ञान का चित्रण पहली बार हुआ हो, ऐसा नहीं है। इनसे पहले के कहानीकारों, जैसेः– प्रेमचंद, जैनेन्द्र, इलाचन्द्र जोशी ने भी मनोविज्ञान का वर्णन अपनी कहानियों में किया है। लेकिन इन सभी कहानीकारों की अपनी–अपनी कहानियों में मनोविज्ञान के वर्णन की शैली अलग–अलग है।

प्रेमचंद यथार्थवादी रचनाकार हैं। उनकी कहानियों में घटनाओं की अधिकता के कारण मनोविश्लेषण कम ही हो पाया है। उन्होंने अपनी कहानियों में पात्रों के यथार्थ का ही चित्रण किया है। कहीं–कहीं उन्होंने चरित्रों के आंतरिक विश्लेषण पर बल दिया है। यह आंतरिक विश्लेषण उनकी कहानियों में मनोविज्ञान का स्पर्श मात्र ही ले पाया है। उनकी सम्पूर्ण कहानियों में अंतिम चरण की कुछ

[2] कथाकार अज्ञेय, डॉ चंद्रकांत म. बांदिवडेकर, पृष्ठ संख्या – 181

कहानियाँ मनोवैज्ञानिक हो सकी हैं। विशुद्ध मनोविश्लेषणात्मक दृष्टिकोण से 'मनोवृत्ति' उनकी सर्वश्रेष्ठ कहानी है, जिसमें पार्क की एक बैंच पर सोई हुई एक युवती के विषय में विभिन्न दर्शकों की मनोवृत्तियों का स्पष्टीकरण है। निष्कर्षतः प्रेमचंद के बारे में कहा जा सकता है कि जब वे यथार्थ के अंकन में पूर्णता प्राप्त कर चुके थे तब मनोविश्लेषण की ओर आकृष्ट हुए। उन्होंने स्वयं इस संबंध में लिखा है––

"... वर्त्तमान आख्यायिका या उपन्यास का आधार ही मनोविज्ञान है। घटनाएँ और पात्र उसी मनोवैज्ञानिक सत्य को स्थिर करने के निमित्त ही लाये जाते हैं। उनका स्थान बिलकुल गौण है। उदाहरणतः मेरी 'सुजन भगत', 'मुक्तिमार्ग', 'पंचपरमेश्वर', 'शतरंज के खिलाड़ी' और 'महातीर्थ' नामक सभी कहानियों में एक न एक मनोवैज्ञानिक रहस्य को खोलने की चेष्टा की गयी है।"[3]

प्रेमचंद के बाद जैनेन्द्र आते हैं, जो अज्ञेय के समकालीन भी हैं। सही मायने में जैनेन्द्र की कहानियों में सबसे पहले मनोविज्ञान का यथार्थ स्वरूप देखने को मिलता है। जैनेन्द्र की कहानियों में फ्रायडवाद के मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों का चित्रण मिलता है। साथ ही साथ इनकी कहानियों में दर्शन का भी प्रभाव देखने को मिलता है। उनकी कहानियाँ दर्शन से पुष्ट मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण को प्रस्तुत करनेवाली हैं। यहाँ पर मनोविज्ञान दर्शन के बोझ से दबा है।

जैनेन्द्र के बाद प्रमुख मनोवैज्ञानिक कहानीकार इलाचन्द्र जोशी हैं। ये मुख्य रूप से फ्रायड के सिद्धांतों से प्रभावित हैं। उन्होंने मानव–चेतना के दो स्तर 'इड' और 'ईगो' को अपनाया है और यही उनकी कहानियों का आधार बना है। उनकी कहानियाँ मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों का ब्यौरा मात्र प्रस्तुत करती हैं। उनकी

[3] साहित्य का उद्देश्य, मुंशी प्रेमचंद, पृष्ठ संख्या – 42

कहानियों के पात्र कुंठित हैं और किसी न किसी मनोग्रंथि के शिकार हैं। फ्रायड के 'सेक्स' और 'स्वप्न सिद्धांत' को लेकर कहानियाँ लिखी गयी हैं। कभी–कभी ये कहानियाँ न लगकर किसी व्यक्ति की 'केस–हिस्ट्री' लगने लगती हैं।

अज्ञेय मनोवैज्ञानिक धरातल पर जैनेन्द्र और जोशी से भिन्न कहानीकार हैं। उनकी कहानियों में आया मनोविज्ञान जैनेन्द्र की भाँति दार्शनिकता से प्रभावित नहीं है। जैनेन्द्र ने केवल व्यक्ति के माध्यम से ही समाज को जाँचा है और अपनी कहानियों में प्रस्तुत किया है। उनकी नजर व्यक्ति-मन की गहराइयों में जाती है और उसके अन्तर्द्वन्द्वों व उलझी हुई मनःस्थितियों का चित्रण करती है। व्यक्ति को छोड़कर वे समाज की समस्याओं में नहीं आना चाहते हैं। अज्ञेय व्यक्ति और समाज दोनों का अध्ययन करते हैं। वे व्यक्तिवादी होने के बावजूद समाज से कटे नहीं, वरन् वैयक्तिक संवेदना के धरातल पर समाज जगत् का चित्रण किया। समाज के घेरे में व्यक्ति किस प्रकार उलझा हुआ है, उसे अज्ञेय ने दिखाने का प्रयास किया है।

अज्ञेय की कहानियाँ इलाचंद्र जोशी की तरह मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों का कथात्मक रूप भी नहीं है। उनकी कहानियों में मनोविज्ञान सीधे–सीधे न आकर, व्यक्ति के जीवन के साथ एकात्म होकर आया है। अज्ञेय की यह विशेषता रही है कि उन्होंने मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों को उस रूप में अपनी कहानियों में नहीं अपनाया, जिस रूप में वे हैं, अपितु उन्हें आत्मसात् करके एक नये संदर्भ में अपनी कहानी के पात्रों के माध्यम से प्रस्तुत किया। इन सिद्धांतों का प्रयोग अज्ञेय ने अपनी कहानियों के पात्रों के मानस को परत दर परत खोलने में किया।

"अज्ञेय का मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण एकांतिक रूप से फ्रायड से ही प्रभावित है। इनकी कहानियों में फ्रायड के अनेक मनोवैज्ञानिक सिद्धांत प्रतिपादित हुए हैं। किन्तु अज्ञेय की विशिष्ट मेधा ने इन सिद्धांतों को आत्मसात् करके नितांत स्वाभाविक रूप में अपने कथा–चरित्रों के माध्यम से प्रस्तुत किया है। स्पष्ट रूप से कहीं भी ऐसा बोध नहीं होता कि किसी विशिष्ट मनोवैज्ञानिक मान्यता की स्थापना हेतु ही कहानी की रचना की गई है।"[4]

अज्ञेय ने अपनी अधिकांश कहानियों में पात्रों के मनोविश्लेषण में फ्रायड के उन मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों का उपयोग किया है, जिनके आधार पर फ्रायड ने मनुष्य के व्यक्तित्व, उसकी क्रियाओं और अभिवृत्तियों का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण किया है।

फ्रायड ने मनुष्य के व्यक्तित्व के निर्माण में 'कामवृत्ति' को सबसे प्रभावी तत्त्व माना है। फ्रायड ने 'कामवृत्ति' को उसके संकुचित अर्थ में न लेकर विस्तृत अर्थ में लिया है। उनके यहाँ 'कामवृत्ति' महज लैंगिक संतुष्टि नहीं है, वरन् इसका अर्थ सभी आनंददायी विचारों और व्यवहारों के अंतर्गत् है। ये व्यवहार सभी समय एक जैसे नहीं होते हैं। इसे स्पष्ट करने के लिए फ्रायड ने मानव चेतना के तीन स्तर अचेतन, अवचेतन, और चेतन का उल्लेख किया है––

(क) अचेतन––

अचेतन चेतना का वह भाग होता है, जिसमें मनुष्य अपनी नैसर्गिक प्रवृत्ति में से उन इच्छाओं को अपने ही व्यक्तित्व में पूरी तरह दफन करता है

---

[4] अज्ञेय का कथा साहित्य, ओम प्रभाकर, पृष्ठ संख्या – 135

जिसे वह सामाजिक और नैतिक दबावों के कारण अभिव्यक्त नहीं कर पाता है। यह मनुष्य के मानस के सबसे निचली सतह पर होता है।

(ख) अवचेतन––

अवचेतन चेतना का वह भाग होता है, जिसमें मनुष्य अपने अनुभवों में ढेरों स्मृतियों को धारण किए रहता है। मनुष्य जब चाहे इसे अपने यादाश्त में ला सकता है। यह अचेतन के ठीक ऊपर रहता है।

(ग) चेतन––

यह अवचेतन के ऊपर का भाग होता है। इस स्तर पर मनुष्य सदैव जागृत होकर मान–मर्यादाओं के तहत कार्य करता है।

अज्ञेय ने अपनी कहानियों में मानव–चेतना के इस स्तर का प्रयोग व्यक्ति के मानस की गुत्थियों को परत दर परत खोलने में किया है। उन्होंने फ्रायड के द्वारा दिए गए 'इड', 'इगो', और 'सुपर इगो' संबंधी सिद्धांतों को भी अपनाया है। मानव–मन के तीनों स्तर 'अचेतन', 'अवचेतन', और 'चेतन' की अभिव्यक्ति 'इड', 'इगो' और 'सुपर इगो' में देखने को मिलता है।

फ्रायड ने 'कामवृत्ति' (लिबिडो) को मानव व्यक्तित्व का आधार मानते हुए 'इड', 'इगो' और 'सुपर इगो' (इदम्, अहम् और पराहम्) की अवधारणाओं का प्रयोग किया है। फ्रायड के अनुसार 'इदम्' (भावनात्मक उर्जा का भंडार) सबसे निचले भाग का, 'अहम्' बिचले भाग का और 'पराहम्' (आदर्श रूप) सर्वोच्च भाग का निर्माण करता है। इसी प्रकार, 'इदम्' पाशविक वृत्तियों (भूख, प्यास, भय,रति आदि) का, 'अहम्' अन्तरात्मा का और 'पराहम्' सामाजिक मान्यताओं, नैतिक मूल्यों और

सामाजिक आदर्शों अर्थात् बाह्य वास्तविकताओं का प्रतिनिधित्व करता है। इन तीनों का उचित तालमेल, अर्थात् इच्छाओं, अन्तःकरण और समाज की मूल्य व्यवस्था के बीच सफल सामंजस्य ही व्यक्तित्व के निर्माण में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। स्पष्ट शब्दों में कहें तो 'इगो' के कहने पर 'इड' द्वारा 'सुपर इगो' की बात मान लिया जाना ही फ्रायड की शब्दावली में मनुष्य का सामाजीकरण है।

अज्ञेय ने फ्रायड के मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों को सीधे–सीधे अर्थों में ग्रहण नहीं किया है। "उस अर्थ में अज्ञेय की कहानियों में मनोविज्ञान अधिक नहीं है जिस अर्थ से प्रायः उसका अर्थ ग्रहण किया जाता है। किसी विशिष्ट मनोवैज्ञानिक सम्प्रदाय को सामने रखकर या मनोविज्ञान के प्रवर्तक की उँगली पकड़कर वे नहीं चले। परन्तु सबके अन्वेषण से उन्होंने लाभ अवश्य उठाया है। काम की लीला की प्रकृति और विकृति, जीवन में अहंकार का स्थान, विविध ग्रंथियों के रूप और कार्य, सामूहिक मानस की अभिव्यक्तियाँ, सृजन–प्रक्रिया में अवचेतन का महत्त्व इत्यादि अनेक विषयों के अध्ययन ने उन्हें मनुष्य की पहचान कराने में सहायता दी।"[5] इसी पहचान ने उनकी कहानियों को एक नया आधार दिया। इसी आधार के बल पर मनुष्य के मानस पटल को, उसके गुण और अवगुण के साथ प्रस्तुत कर पाने में अज्ञेय ने सफलता प्राप्त की है।

अज्ञेय ने लगभग अपनी सभी कहानियों में व्यक्ति के मानस का काफी गहराई के साथ विश्लेषण किया है। कहीं यह विश्लेषण सामाजिक स्तर पर है, तो कहीं व्यक्तिगत स्तर पर। अज्ञेय की कहानियों में स्त्री–पुरुष संबंधों के कई स्वरूप देखने को मिलते हैं। स्त्री को लेकर पुरुष के मन में और पुरुष को लेकर स्त्री

[5] कथाकार अज्ञेय, डॉ. चंद्रकांत म. बांदिवडेकर, पृष्ठ संख्या – 186

के मन में किस तरह की मानसिक हलचल होती है, यह इनकी कहानियों में देखा जा सकता है। 'अछूते फूल' कहानी इसी प्रकार की एक कहानी है।

इस कहानी में 26 वर्ष की मीरा का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण किया गया है। मीरा एक पढ़ी–लिखी लड़की और अपने समाज में सफल थी। "पुरुषों पर प्रभाव डालने की उसमें कुछ विशेष शक्ति थी। उस शक्ति को प्रतिभा कहें, तो अनुचित न होगा। ... जहाँ तक उसकी याद जाती थी, अपने पिछले दस–एक वर्षों में, जबसे उसने होश सँभाल कर आत्मनिर्णय का अधिकार पाया और विद्यार्थी–समाज के स्वच्छन्द वातावरण में पैर रखा, तबसे उसे एक भी पुरुष ऐसा नहीं मिला था जो उसके संपर्क में आया हो और अप्रभावित रहा हो। पुरुष आते थे, कोई झुककर, कोई अकड़ कर, कोई लोलुप भाव से, कोई कठोर उपेक्षा से, लेकिन फिर मानो उनपर कोई सम्मोहिनी सी छा जाती थी, मानो उनके पंख भीग जाते थे और फड़फड़ाना बन्द हो जाता था –– या यों कहें कि किसी फैंसी नस्ल के पालतू कुत्ते की तरह वे मीरा के पीछे दुम हिलाते हुए चल पड़ते थे। मीरा उनसे खेलती थी, उन्हें नचाती थी, उनसे काम लेती थी ...।"[6]

इन सबके बावजूद उसने पुरुषों से एक दूरी कायम कर रखी थी। वह अपने अहं में ही मस्त थी। "पंक में पंकज तो नहीं, पर हाँ, वह मधुमक्खी अवश्य, जो अपने संचित किए हुए मधु में अपने पंख नहीं लपटाती, फँसती नहीं, मुक्त ही रहती है ... अछूती। अस्पृश्य ..."[7] मीरा के अंदर एक मानसिक कुंठा घर कर गयी थी। यह अपूर्त काम भावना का विकृत रूप था, जिसके कारण वह पुरुषों से

---

[6] अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 349
[7] वही, पृष्ठ संख्या – 353

असामान्य व्यवहार करती थी। इसी कुंठा का परिणाम था कि उसने राह चलते समय एक युवक को साइकिल से गिरा दिया था, जिससे वह घायल हो गया था। उस युवक को उसने उठाकर अस्पताल पहुँचा दिया था। डॉक्टर के यह कहने पर कि अब चिंता की कोई बात नहीं, वह अपने घर आ गयी थी। बार–बार उस साइकिल वाले युवक का चेहरा उसकी आँखों के सामने आ जा रहा था और वह बार–बार अपना ध्यान उधर से हटाने का असफल प्रयास करती जा रही थी। उसने अपने हाथ में लिए हुए फूल को देखा----

"मुरझाया हुआ, कुचला हुआ, गर्मी और पसीने और दबाव से अपनी सफेदी खोकर काला पड़ा फूल।"[8]

"यह मानो उसके संभावित जीवन की प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति थी। मनोवैज्ञानिक संदर्भ एवं स्वरूप ध्यान में न लें तो 'अछूते फूल' एक सामान्य कहानी लग सकती है और उसके मनोवैज्ञानिक संदर्भों को पहचानें तो अर्थवत्ता से कहानी झिलमिलाने लगती है।"[9]

वास्तव में अज्ञेय की कहानियों में मनोवैज्ञानिक तथ्यों के आ जाने से कहानियों की संवेदना गहरी हुई है और व्यक्ति के उलझे हुए मानस को सुलझाकर प्रस्तुत किया जा सका है। 'हीली–बोन की बत्तखें' कहानी में एक स्त्री की गहरी संवेदना और उसके मन की उलझनों का वर्णन है। यह सही अर्थों में एक मनोवैज्ञानिक कहानी है। उसके जीवन में एक पुरुष के अभाव के उपरांत की रिक्तता का वर्णन है।

---

[8] वही, पृष्ठ संख्या – 353
[9] कथाकार अज्ञेय, डॉ. चंद्रकांत म. बांदिवडेकर, पृष्ठ संख्या – 184

इस कहानी का मुख्य पात्र हीली है। वह अपनी दोनों बहनों से सुन्दर है। वह 34 साल की हो गयी है, मगर उसके जीवन में रिक्तता है। ऐसा नहीं है कि उसने कभी प्यार नहीं पाया था–– "बहुत–कुछ था –– प्यार उसने पाया था और उसने सोचा भी था कि ––"[10] संभव है कि किसी कारणवश बात आगे न बढ़ी हो। अब वह अकेली है। उसने कुछ बत्तखें पाल ली हैं ताकि उसका मन लग सके। किन्तु कुछ दिनों से उसके बत्तखों का शिकार एक नर लोमड़ी करने लगा था। वह इससे काफी आहत थी। अचानक उसकी मदद करने कैप्टन दयाल आया, जो सेना में इंजीनियर था। कैप्टन दयाल के पूछने पर कि "आपका मकान बहुत साफ और सुन्दर है"

हीली ने एक रूखी–सी मुस्कान के साथ कहा, "हाँ, कोई कचरा फैलानेवाला जो नहीं है, मैं यहाँ अकेली रहती हूँ।"[11]

हीली के द्वारा दिया गया यह जवाब उसके जीवन के सूनेपन को व्यक्त करता है। अक्सर लोग भी कहा करते थे–– " हीली सुन्दर है, पर स्त्री नहीं है। वह बांबी क्या, जिसमें सांप नहीं बसता ?"[12]

वास्तव में हीली अपनी स्थिति से दुखी थी। निश्चय यह दुख उसके परिवार के न बस पाने का था।

कहानी अचानक तब आगे जाकर मोड़ लेती है जब कैप्टन दयाल उस बत्तखखोर लोमड़ी को मार देता है। "हीली ने स्थिर दृष्टि से देखा। करारे में मिट्टी खोद कर बनायी हुई खोह में –– या कि खोह की देहरी पर –– नर

---

[10] अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 539
[11] वही, पृष्ठ संख्या – 537
[12] वही, पृष्ठ संख्या –539

लोमड़ी का प्राणहीन आकार दुबका पड़ा था –– कास के फूल की झाड़ू–सी पूँछ उसकी रानों को ढक रही थी जहाँ गोली का जख्म होगा। भीतर शिथिल–गत लोमड़ी उस शव पर झुकी खड़ी थी, शव के सिर के पास मुँह किए, मानो उसे चाटना चाहती हो और सहमकर रूक जाती हो। लोमड़ी के पाँव से उलझते हुए तीन छोटे–छोटे बच्चे कुनमुना रहे थे। उस कुनमुनाने में भूख की आतुरता नहीं थी; न वे बच्चे लोमड़ी के पेट के नीचे घुसड़–पुसड़ करते हुए भी उसके थनों को ही खोज रहे थे।''[13]

यह देखकर हीली की संवेदना आहत हुई। नर लोमड़ी के मारे जाने के कारण के दोषी अपने ग्यारह बत्तखों की गर्दन मरोड़कर हत्या कर देती है। वास्तव में हीली के द्वारा अचानक किए गए इस व्यवहार का कारण वे ग्रंथियाँ हैं जो उसके विगत जीवन के उतार–चढ़ाव के कारण उसके मन में बन गयी हैं। वह निःसंतान और अकेली है। इसी कारण वह सन्तान और परिवार के महत्त्व को समझती है। उसे नर लोमड़ी के मारे जाने के बाद कहीं–न–कहीं लगता है कि उसका ही घर उजड़ गया हो। एक सुखमय गृहस्थी का अंत हो गया हो।

एक कहानी है 'हरसिंगार', जिसमें गोविन्द के जीवन में मात्र एक बार एक रोगिणी स्त्री के आने के बाद की स्थितियों का वर्णन है। इस कहानी का मुख्य पात्र गोविन्द अनाथालय का निवासी है। उसका काम अपने कुछ साथियों के साथ मिलकर लोगों को गाना सुनाना और भीख माँगना था ताकि अनाथालय के लोगों का पेट भर सके। आज से 20 साल पहले गोविन्द के साथ एक घटना घटी थी। यह घटना जो अब गोविन्द के अवचेतना का हिस्सा बन गयी है, अचानक सजीव हो उठी है। कहीं न कहीं यह घटना स्त्री और पुरुष, दोनों के एक–दूसरे के लिए

[13] अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 541

होने, न होने की उपयोगिता को लेकर है। शायद यह चीज इस कहानी में गोविन्द के लिए ज्यादा जरूरी है और कहानी में गोविन्द के अवचेतन का दुख दीखता भी है।

एक बार गोविन्द एक रोगिणी लड़की के घर गाना गाने जाता है। उस लड़की को देखकर उसके मन में स्त्री संबंधी तरह–तरह की भावनाएँ जागती हैं, जो उसके मानस में कब की दफन हो चुकी हैं। उसके साथियों के द्वारा रोगिणी की बहनों को एकटक देखे जाने पर वह आत्मग्लानि से भर जाता है। उसके मन में पुरानी बातें सामने आने लगती हैं––

"हरि के मन में ? शायद ··· पर उसके मन में शायद और ही कोई भाव है –– वह क्यों ऐसे उन युवतियों की ओर देख रहा है ? गोविन्द को याद आया, अनाथालय में पढ़ते–पढ़ते लड़के –– जिनमें वह भी था, वह भी! –– अपनी स्लेटों पर स्त्रियों के शरीर के कल्पनात्मक चित्र (देखे कब थे उन्होंने स्त्रियों के शरीर ?) बना–बनाकर, उन पर भद्दे–भद्दे वाक्य लिखकर, मास्टर की आँख बचा–बचाकर एक–दूसरे को दिया करते थे ··· हरि की दृष्टि को देखते हुए, गोविन्द को वे सब वाक्य याद आ गये;"[14]

अज्ञेय के द्वारा यह वर्णन फ्रायड के द्वारा दिए गए कामवृत्ति के सिद्धांत का ही उदाहरण है। यह व्यक्ति के मानस का अवचेतन है जो छिपकर किसी काम को अंजाम देता है। गोविन्द सामाजिक मान्यताओं के परे यह काम करता है, मगर अपने शिक्षक से छिपकर। यह गोविन्द के बचपन का इगो है, लेकिन अब उसे उन चीजों को लेकर ग्लानि का भाव है। यह ग्लानि का भाव उसका सुपर इगो है, जो सामाजिक मान–मर्यादाओं के फलस्वरूप उत्पन्न हुआ है। अज्ञेय ने गोविन्द के

[14] अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 243

मन की ग्रंथियों को काफी सजगता के साथ खोला है। अपने जीवन में एक बार आयी उस युवती के बारे में वह सोचता है---

"स्त्री के बिना कुछ भी अच्छा नहीं है, कुछ भी मधुर नहीं है, कुछ भी मृदुल नहीं है, कुछ भी सुन्दर नहीं है, स्त्री --- जो केवल स्त्री ही नहीं, संसार की कुल सुन्दर और मधुर वस्तुओं की प्रतिनिधि है ...।"[15]

इस कहानी में गोविन्द के जीवन में सिर्फ एक बार आयी एक रोगिणी स्त्री की घटना को लेकर गोविन्द के मानस का मनोविश्लेषण अद्वितीय है।

अज्ञेय ने अपनी कहानियों में अव्यक्त प्रेम का सुन्दर चित्र प्रस्तुत किया है। उन्होंने इस प्रेम को व्यक्त करनेवाले पात्रों का मनोविश्लेषण अधिक गहराई के साथ किया है। यह प्रेम आत्मदान और उपासना के रूप में प्रस्तुत हुआ है। 'सिगनेलर' में इसी प्रकार के प्रेम का वर्णन है। इस कहानी में बलराज नामक युवक पिछले आठ साल से आकाश में सिगनल द्वारा अपने प्रेम का संदेश देता रहा है। कहानी में लेखक इस तरह के संदेश को देखकर अचंभित हो जाता है---

"मैंने पाया कि मैं उस प्रकाश के सन्देश को साफ--साफ पढ़ सकता हूँ --- मोर्स प्रणाली पर सन्देश भेजा जा रहा था --- आइ लव यू --- आइ लव यू --- आइ लव यू ...."[16]

जब संध्या को सारी चीजों का पता चलता है तो बचपन में बलराज से भेंट के सारे प्रसंग उसे याद आ जाते हैं। यह प्रसंग संध्या के मानस में एक नया अर्थ प्रदान करता है। जब तक संध्या बलराज के पास पहुँचती है तब तक

---

[15] अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 246
[16] वही, पृष्ठ संख्या – 324

उसका अंत हो चुका होता है। बलराज जिस टॉर्च से संध्या को प्रेम – सन्देश भेजा करता था, उसे 'स्मृति–चिह्न' के रूप में संध्या अपने पास रख लेती है।

इस कहानी में बलराज का प्रेम आत्मदान और उपासना का प्रेम है। वह संध्या से अपने अवचेतन में प्रेम करता है और अहम् के कारण उसे व्यक्त नहीं कर पाता है। संभव है कि वह लड़की के इंकार की संभावना से भयभीत हो, जैसाकि अक्सर प्रेम में हुआ करता है। इसी भय के कारण वह आठ सालों तक सिगनल के द्वारा कहता रहा कि 'मैं तुमसे प्रेम करता हूँ'। अज्ञेय के द्वारा एक व्यक्ति के प्रेम संबंधी मानस का चित्रण अद्‌भुत है।

इसी तरह के प्रेम का वर्णन उनकी 'मनसो' कहानी में भी है। इस कहानी का पुरुष पात्र महेश देश की आजादी के लिए लड़नेवाला सैनिक है, जो जेल से भागकर गाँव में गुमनामी की जिन्दगी जी रहा है। इसी गाँव में रोज वह मनसो को देखता है। उसके बारे में तरह–तरह की कल्पना करता है, लेकिन अपनी कल्पना को साकार करने के लिए कुछ नहीं करता। वह केवल उसे धीरे–धीरे अपने हृदय में विशेष स्थान देता जाता है। यह विशेष स्थान उसके अहम् तक ही सीमित है तभी तो वह सामाजिक वातावरण के बाहर ही सोच रहा है––

"वह अपने को समझाने लगा। मनसो कुछ नहीं है। जो वास्तविकता है और जो उसकी कल्पित मनसो है, उनमें कुछ भी साम्य नहीं है। उसकी मनसो एक वातावरण है, एक स्वप्न, एक छाया जिसकी अस्पृश्यता ही उसका सौंदर्य और आकर्षण है, मनसो बाहर नहीं, उसके सामने नहीं, उसके हृदयस्थ एक चित्र है। बस!"[17]

[17] अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 338

इस कहानी में महेश की मनसो उसकी मानसिक मनसो है, जिसका सामाजिक मनसो से कोई संबंध नहीं है। महेश स्वयं यह जानता है कि जिस मनसो को लेकर वह काल्पनिक संसार रच रहा है, उसका यथार्थ से कोई वास्ता नहीं है, तब भी वह मनसो की चाह में दुखी रहता है। एक दिन मनसो उससे पूछती है–– "परदेशी, तुम इतने दुःखी क्यों दिखते हो ?"[18] महेश इस प्रश्न से असमंजस में पड़ जाता है और सही जवाब नहीं दे पाता है। मनसो फिर पूछती है, महेश के जाने एक असंभव प्रश्न–– "परदेशी तुमने कभी प्यार किया है?"[19] महेश अधूरा उत्तर ही दे पाता है–– "हाँ, अनेक बार, अनेकों दिन . . ."[20] इसके बाद किसी के बुलावे पर मनसो चली जाती है और इधर महेश को भी सिपाही बंदी बनाकर कारागार में डाल देते हैं।

कारागार में महेश अपने अवचेतन मन से सारी स्मृतियों को बाहर लाकर सोचता है। सोचता है अपने प्यार के बारे में–– "कुछ हो, वह स्मृति बची है, एक सजीव कम्पन–युक्त भर्रायी हुई आवाज पूछती है, 'तुम इतने दुःखी क्यों दिखते हो ?' और दो रहस्य–भरी आँखें असीम आत्यान्तिक भावैक्य और असीम अस्पृश्यता की दृष्टि में स्त्री–हृदय की चिरन्तन ललकार करती हैं –– 'तुमने कभी प्यार किया है ?'

'कभी किया है ? कभी किया है ? कभी किया है ?' "[21]

---

[18] अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 341
[19] वही, पृष्ठ संख्या – 342
[20] वही, पृष्ठ संख्या – 342
[21] वही, पृष्ठ संख्या – 343

महेश के द्वारा अपने इकतरफा प्यार को मनसो के सामने नहीं प्रकट करकासकने कारण कहीं न कहीं उसका मानसिक भय है, जो उसके सामाजीकरण के दौरान उसके मन में बैठ गया है। यह भय है –– कहीं लड़की (मनसो) उसके प्यार को स्वीकार न करे तो ···।

अज्ञेय की कहानियों में स्त्री और पुरुष के संबंधों के बीच देश-प्रेम और वैयक्तिक-प्रेम को लेकर भी मानसिक संघर्ष दिखता है। ऐसी कहानियों में 'अकलंक' कहानी प्रमुख है। इस कहानी में मार्टिन और क्रिस्टाबेल प्रेमी और प्रेमिका हैं। दोनों देशभक्त भी हैं। सेनापति का आदेश है कि सभी लोग अपना घर नष्ट कर दें ताकि शत्रु के लिए कोई भी शरणस्थली न बचे, किन्तु मार्टिन कुछ सोचकर ऐसा नहीं करता है। इससे उसकी प्रेमिका नाराज हो जाती है तथा देशभक्ति के जोश में अपने वैयक्तिक-प्रेम को कुचलकर मार्टिन को बंदी बनवाकर उसका कोर्टमार्शल करवाने पर आतुर हो जाती है। अपने इस दाँव का पता मार्टिन को भी नहीं लगने देती है।

इधर मार्टिन बाहरी शत्रु से निपटने के लिए जो योजना बनाता है, उसे क्रिस्टाबेल से अगाध प्रेम करने के बावजूद नहीं बताता है। संभव है कि वह ऐसा अपने अहम् और अपनी प्रेमिका पर सम्पूर्ण अधिकार के कारण करता हो। यहाँ मार्टिन का प्रेम भी काफी जटिल है। वह अवचेतन में अपनी प्रेमिका के प्रति निर्मम हो जाता है।

क्रिस्टाबेल मार्टिन पर विश्वास नहीं करती –– यह मार्टिन के अवचेतन का दुःख है। इस दुःख को वह अपनी प्रेमिका को लिखे अंतिम पत्र में व्यक्त करता है––

"सुनो क्रिस्टाबेल, जाते हुए एक बात कहे जाता हूँ। मैं कायर नहीं हूँ , इस बात का विश्वास मैं तुम्हें उसी समय दिला सकता था; पर तुम विश्वास नहीं कर सकीं। मुझे तुमसे विश्वास की –– सहज, स्वाभाविक, अटल विश्वास की –– आशा थी। यह आशा प्रत्येक मनुष्य करता है। तुम वैसा विश्वास नहीं दे सकीं। अगर प्रत्येक बात में विश्वास का पात्र होने के लिए प्रमाण देना पड़े कि, अगर तुम्हारा प्रेम प्राप्त करने के लिए नित्य ही यह दिखाना पड़े कि मैं उसका पात्र हूँ, तो ऐसे प्रेम का क्या मूल्य है ? अगर तुम विश्वास–भर कर लेतीं।"[22]

नीरसता का भाव दाम्पत्य जीवन में किस प्रकार से व्याप्त है, यह अज्ञेय की कहानियों में देखा जा सकता है। नीरसता को लेकर पात्रों का जो मनोविश्लेषण हुआ है, उससे इस बात का अंदाजा लगाया जा सकता है कि दाम्पत्य जीवन में कितना अधूरापन है। 'अलिखित कहानी' और 'ग्रैंग्रीन' इसी प्रकार की कहानी है।

'अलिखित कहानी' में लेखक और उसकी गृहलक्ष्मी का जीवन नीरस है। लेखक अपने जीवन की नीरसता इस प्रकार व्यक्त करता है––

"मैं कोई बड़ा आदमी नहीं हूँ –– पता नहीं, आदमी भी हूँ कि नहीं ! –– मैं हिन्दी का कहानी–लेखक हूँ। और मेरी गृहलक्ष्मी एक हिन्दी लेखक की गृहलक्ष्मी है –– हिन्दी लेखकों का और किसी लक्ष्मी से परिचय ही कब होता है ?

[22] अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 67

हम दोनों का जीवन बिलकुल नीरस है। इसके अलावा कुछ हो भी नहीं सकता। और इसीलिए हमारी लड़ाई अवश्यंभावी है।''[23]

लेखक का दुःख उसके अवचेतन में गढ़ा हुआ है। अपने दुःख के बारे में सोचते–सोचते लेखक की आँखें लग जाती हैं और वह स्वप्न में ही तुलसीदास एवं तुलसू को उनकी पत्नियों के साथ लेकर उनके जीवन की व्यथा देख डालता है। यह व्यथा दाम्पत्य जीवन के खटास को लेकर है। संपूर्ण कहानी स्त्री–पुरुष संबंधों के आपसी नोंक – झोंक को लेकर चलती है।

''अलिखित कहानी में तो सृजन–प्रक्रिया का अवचेतन मानस से संबंध स्थापित किया गया है। तुलसीदास और तुलसू एक ही कवि मानस के दो रूप हैं जो स्वप्न में अपनी ही अवस्था में और कभी साहित्य में प्रकट हो जाते हैं।''[24] लेखक स्वयं कहता है––

''स्वप्न!

पता नहीं क्यों, मैं चौंककर कर उठ बैठा, मैंने जाना, मैं वह सब पढ़ नहीं रहा था, वह स्वप्न में मेरी कल्पना दौड़ रही थी, वह मेरे जाग्रत विचारों का प्रक्षेपण (प्रोजेक्शन) था ···।''[25]

'रोज' कहानी में भी दाम्पत्य जीवन की नीरसता का चित्रण है। इस कहानी में मालती के जीवन में एक गहरी दृढ़, एक मौन प्रलम्ब वेदना छा गयी है। उसकी मनोव्यथा का चित्रण अज्ञेय ने काफी गहराई के साथ किया है। यहाँ पति–पत्नी का परंपरागत संबंध है, जिसमें आनंद के सिवाय कर्त्तव्य ही सबकुछ है।

---

[23] वही, पृष्ठ संख्या – 230
[24] कथाकार अज्ञेय, डॉ. चंद्रकांत म. बांदिवडेकर, पृष्ठ संख्या – 183
[25] अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 238

मालती के विवाह के दो वर्ष हुए हैं, परन्तु उसे क्या हो गया ? लेखक ने जिस समय उसे देखा था, उस समय वह क्या रही होगी और अब क्या हो गयी। लेखक मालती की स्थिति को देखकर सोचता है--

"यह मैंने अभी तक सोचा नहीं था, किन्तु अब उसकी पीठ की ओर देखता हुआ मैं सोच रहा था, कैसी छाया इस घर पर छायी हुई है ... और विशेषतया मालती पर ...।"[26]

लेखक महसूस करता है कि मालती के किसी काम में कोई उल्लास नहीं है। जीवन नीरस हो गया है और शुष्क यंत्र की भाँति चल रहा है। वह सभी चीजों को यंत्रवत् सहन करने की आदी हो गयी है। मालती के दाम्पत्य जीवन में खड़कनेवाली घड़ी की ध्वनि और मालती के रोजमर्रा के उबाऊ काम -- इसके अतिरिक्त वहाँ कुछ था ही नहीं। मालती के लिए बच्चे का गिरना, चोट खा जाना, चिन्ता की बात नहीं, रोज की बात हो गयी है। कहीं न कहीं मालती भी अपने बच्चे के प्रति उदासीन होकर एवं अपने जीवन के आनंद के श्रोत सुखाकर अपने नीरस पति से बदला लेना चाहती है।

मालती के जीवन में संवेदनहीनता बढ़ रही है। मालती घड़ी के यांत्रिक खड़कने की तरह काम करती हुई निरर्थक, नीरस, संवेदनहीन जीवन जी रही है। अज्ञेय ने भारतीय परंपरा में पिसती हुई एक नारी की मनोव्यथा का चित्रण किया है। उसकी भीतरी गाँठों को खोलकर दाम्पत्य जीवन की नीरसता के सारे तत्त्वों को सामने प्रस्तुत कर दिया है।

---

[26] अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 208

'वे दूसरे' कहानी में पति–पत्नी के मानसिक उथल–पुथल को दिखाया गया है। यहाँ हेमंत और सुधा के बीच संबंधों के अनेक अर्थ छिपे हुए हैं। यहाँ पर एक मनोवैज्ञानिक गाँठ है, जो व्यक्ति को सहज एवं स्वस्थ नहीं होने देती है। वैवाहिक जीवन में दोनों को लगता है कि वे साथ नहीं रह सकते हैं। अतः दोनो के बीच तलाक हो जाता है। हेमंत तलाक के क्षण को याद कर कई चीजों को सागर के तट पर बैठकर सोचता है। तलाक की विदाई के समय उसने सुधा से अपने द्वारा किए गए प्रश्न के इस तरह की उत्तर की कभी कल्पना नहीं की। हेमन्त अपने मन के अनुताप को व्यक्त करता हुआ कहता है कि,"और अगर तुम मुझे इतना भूल सको –– यानी मेरे साथ की कटुता को –– दोबारा विवाह की बात तुम्हारे मन में उठे, तो –– मुझे बड़ी सान्त्वना मिलेगी –– मेरा अनुताप तब भी मिटेगा या नहीं यह तो नहीं कह सकता, पर इतना तो मान सकूँगा कि मैं सदा के लिए शाप न बना, कि –– "

अब सुधा फिर उसकी ओर मुड़ी। अब उसने अपने को वश में कर लिया था –– वह अप्रतिहत मुसकान उसके चेहरे पर नहीं थी। उसने रूखे स्वर से कहा, "मेरे विवाह की बात सोचने की तुम्हें जरूरत नहीं है। हाँ, उससे तुम अपने को अधिक स्वतंत्र महसूस कर सकोगे, यह तो मैं समझती हूँ।"[27]

वास्तव में इस उत्तर से हेमंत काफी अन्दर तक टूट पड़ता है। इसके बाद उसे पुनः तलाक के अन्य कारणों का ख्याल आता है और उसका मन व्याकुल हो उठता है। संभोग के समय का दृश्य याद आता है। हेमंत की चिंता सामने आती है कि यह अपर–शरीरत्व का भाव मिटता क्यों नहीं ?

---

[27] अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 515

"उसने किंचित् बल से सुधा का परे को मुड़ा मुँह अपनी ओर फिराया –– कदाचित् उसकी आँखों में आँखें डालकर दोनों इस खाई को पार कर सकें –– लेकिन सुधा की आँखें जोर से भिंची हुई थीं ––क्यों ? वासना अन्धकार माँगती है शायद, ताकि वह अपनी ज्वालामयी सृष्टि को अपने ढंग से देखे, यथार्थ उसमें बाधा न दे –– पर बन्द आँखें –– क्या वह ज्योतिः शरीर अँधी आँखों से ही देखा जायेगा ? पर अँधी आँखें पृथक् आँखें हैं, और वासना अगर युत नहीं है तो कुछ नहीं है ––

उसने भर्राये स्वर में कहा, "आँखें खोलो––"

वह जान सका कि आँखें खुलने के साथ–साथ सुधा का शरीर सहसा कठोर पड़ गया है, और वह जान सका कि पहचान उन आँखों में नहीं थी; उन आँखों में था –– वह, वह दूसरा, और इसीलिए आँखें बन्द थीं।"[28]

सुधा के अंदर एक मनोवैज्ञानिक गाँठ बन गयी है, जिसके कारण वह संभोग के क्षणों में आँखें बंद कर लेती है। हेमंत ने सुधा से इसलिए विवाह किया था कि वह एक विवाहित व्यक्ति से फँसी थी। वह नहीं चाहता था कि उस व्यक्ति का परिवार टूटे। उस समय उसने सोचा था–– "प्यार जहाँ है वहाँ हो, और विवाह ... विवाह तो सामाजिक सम्बन्ध है, व्यक्ति के जीवन में यह बाधक हो ही, ऐसा क्यों ?"[29]

"क्या वह बहुत बड़ा स्वीकार नहीं है ? किन्तु कैसी अद्भुत है, यह बात कि जिसकी आत्मा हम दूसरों को सौंपने को तैयार हैं –– क्योंकि उसके

---

[28] अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 517
[29] वही, पृष्ठ संख्या – 519

ब्याह की बात स्वीकार करते हैं –– उसी की देह को सौंपते क्यों हमें इतना क्लेश होता है ? 'दूषित' या 'भ्रष्ट' क्या देह होती है, या मन–आत्मा ? या कि देह को हम देख, छू सकते हैं, बस, इतनी–सी बात है ?''[30]

हेमंत आगे सोचता है कि यदि वह (दूसरी लड़की) होती तो वह मुझसे यही कहती––

मैंने अपनी आत्मा तुम्हें दी, इसलिए मेरी देह भी तुम लो –– क्योंकि वह आत्मा का खोल है। और उसके बदले कुछ देना कभी मत चाहना, क्योंकि वह मेरे इस उपहार का अपमान है।''[31]

यह सारा दुःख हेमंत के अवचेतन का दुःख है। वह चाहता था कि सब कुछ ठीक हो, पर हो नहीं सका। वैवाहिक जीवन में मनोवैज्ञानिक गाँठ बन गयी थी, जिसके कारण कुछ भी ठीक न हो सका।

इस प्रकार अज्ञेय की अधिकांश कहानियों में मनोवैज्ञानिक तथ्य भरे पड़े हैं। कहानियों में मनोवैज्ञानिक तथ्यों के आ जाने से कहानी के पात्रों के मानस को परत दर परत खोल पाने में अज्ञेय को पर्याप्त सफलता मिली है। यहाँ पर एक बात ध्यान देने योग्य है कि अज्ञेय की कहानियों में मनोविज्ञान उस अर्थ में नहीं है, जिस अर्थ में प्रायः उसका अर्थ ग्रहण किया जाता है। फिर–भी; इतना अवश्य है कि मनोविज्ञान से उन्हें मनुष्य की मानसिकता को समझने में मदद मिली है और इसी समझ के फलस्वरूप वे अपनी कहानियों के पात्रों के मानस के अंतर्द्वन्द्व को प्रस्तुत कर पाने में सफल हुए हैं।

---

[30] वही, पृष्ठ संख्या – 520
[31] अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 520

अध्याय तीन

अज्ञेय की कहानियों में स्त्री–पुरुष संबंधों का स्वरूप

"जो जानते हैं कि प्रेम कुछ होता ही नहीं, केवल सेक्स होता है, तो मैं पूछना चाहूँगा कि प्रिय को आदर्शीकृत करके देखनेवाले पहले प्यार में और उसके समान्तर सिर उठाना चाहने वाली वासना में जो संघर्ष होता है, उसका सम्प्रेषण इस से अच्छा और कैसे होता है? आप कह दें कि पहला प्यार होता ही नहीं, शुरू से केवल सेक्स की आक्रामक वासना होती है —— कि लड़की को चाहा नहीं जाता, केवल फँसाया जाता है —— तो मैं बहस यहीं समाप्त मान लूँगा : इसी पर आप अपने को आधुनिक मान लेंगे तो मान लें, मैं आप को अभागा गिनूँगा। अपने पक्ष में आप बहुत–सी आधुनिक कहानियाँ पेश कर देंगे तो मैं कहूँगा, हाँ, अभागों की संख्या बढ़ती जा रही है।"

—— सच्चिदानंद हीरानन्द वात्स्यायन 'अज्ञेय'

अज्ञेय की कहानियों में स्त्री–पुरुष संबंधी प्रसंग भरे पड़े हैं। स्त्री–पुरुष संबंधों के जो प्रमुख आधार स्तंभ होते हैं, उन्हें अज्ञेय ने अपनी कहानियों में काफी सजगता और सहजता के साथ उभारा है। ये प्रमुख स्तंभ हैं–– प्रेम, प्रेम की महत्ता, प्रेम का स्वरूप, दाम्पत्य–जीवन, दाम्पत्य–जीवन की नीरसता और उबाऊपन, दाम्पत्य–जीवन में बच्चों की उपयोगिता, दाम्पत्य–जीवन से उभरे हुए खटास और इस खटास के कारण तलाक की स्थिति आदि। अज्ञेय ने इन सभी प्रसंगों को अपनी कहानियों में इस प्रकार पिरोया है कि ये सभी प्रसंग जीवन की सत्यता को लेकर सजीव हो उठे हैं।

स्त्री–पुरुष संबंधों का मुख्य आधार प्रेम ही होता है। यह प्रेम एक–दूसरे को केवल मानसिक और शारीरिक स्तर पर बाँधता ही नहीं, अपितु एक–दूसरे के व्यक्तित्व के विकास में उत्सर्गपूर्ण सहयोग भी देता है। इसी प्रेम पर स्त्री–पुरुषों के बीच टिकाऊ और सुखमय जीवन बनते हैं। प्रेम के बिना जीवन नीरस, दिशाहीन एवं उद्देश्यहीन होता है।

अज्ञेय की कहानियों में प्रेम का अद्‌भुत चित्रण देखने को मिलता है। उन्होंने अपनी कहानियों में प्रेम के ऐसे चित्र प्रस्तुत किए हैं जो हिन्दी कहानी की महत्वपूर्ण उपलब्धि बन गयी है। कहानियों में प्रेम के ऐसे रूप का वर्णन है, जो पाठक समुदाय को भावविभोर कर देता है। कहीं न कहीं उस प्रेम को स्वीकार कर देने पर भी मजबूर कर देता है। अज्ञेय प्रेम को सेक्स से अलग मानकर चलते हैं। इस संबंध में उन्होंने लिखा है––

"मेरी छोटी–सी कहानी 'साँप' में कुछ को केवल 'अतिरिक्त रोमानी तत्त्व' मिला है; पर उन लोगों की बात छोड़ दें जो जानते हैं कि प्रेम कुछ होता ही नहीं, केवल सेक्स होता है, तो मैं पूछना चाहूँगा कि प्रिय को आदर्शीकृत करके देखनेवाले पहले प्यार में और उसके समान्तर सिर उठाना चाहने वाली वासना में जो संघर्ष होता है, उसका सम्प्रेषण इस से अच्छा और कैसे होता है ? आप कह दें कि पहला प्यार होता ही नहीं, शुरू से केवल सेक्स की आक्रामक वासना होती है –– कि लड़की को चाहा नहीं जाता, केवल फँसाया जाता है –– तो मैं बहस यहीं समाप्त मान लूँगाः इसी पर आप अपने को आधुनिक मान लेंगे तो मान लें, मैं आप को अभागा गिनूँगा। अपने पक्ष में आप बहुत–सी आधुनिक कहानियाँ पेश कर देंगे तो मैं कहूँगा, हाँ, अभागों की संख्या बढ़ती जा रही है।"[1]

अज्ञेय ने अपनी कहानियों में प्रेम को अधिक महत्त्व दिया है। उन्होंने प्रेम के संदर्भ में माना है कि जो वास्तविक सच है, उसे केवल अनुभव किया जा सकता है; शब्दों के द्वारा व्यक्त नहीं किया जा सकता है। 'अमरवल्लरी' कहानी में एक जगह एक युवती अपने प्रेम के बारे में कहती है––

"मैं जो–कुछ सोचती हूँ, समझती हूँ, अनुभव करती हूँ, उसका अणुमात्र भी व्यक्त नहीं कर सकी –– पर इससे क्या ? जो कुछ हृदय में था –– है –– उससे मेरा जीवन तो आलोकित हो गया है। प्रेम में दुःख–सुख, शांति और व्यथा, मिलन और विच्छेद, सभी हैं, बिना वैचित्र्य के प्रेम जी नहीं सकता ··· नहीं तो जिसे हम प्रेम कहते हैं, उसमें सार क्या है ?"[2]

---

[1] भूमिका, अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 24
[2] अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 39

इसी कहानी में प्रेम को संयोजक और विच्छेदक के संघर्ष के रूप में देखा गया है। वर्णन है––

"मैं देखता हूँ, संसार दो महच्छक्तियों का घोर संघर्ष है। ये शक्तियाँ एक–दूसरे से भिन्न नहीं हैं, एक ही प्रकृति के दो विभिन्न पथ हैं। एक संयोजक है–– इसका भास फूलों से भौरों का मिलन में, विपट से लता के आश्लेषण में चंद्रमा से ज्योत्सना के संबंध में, रात्रि से अंधकार के प्रणय में, उषा से आलोक्य के ऐक्य में होता है; दूसरी शक्ति विच्छेदक है–– इसका भास आँधी से पेड़ों के विनाश में, विद्युत से लतिकाओं के झुलसने में, दावानल से वनों के जलने में, शंकुत द्वारा कपोतों के मारे जाने में होता है ... कभी–कभी दोनों शक्तियों का एक ही घटना में ऐसा सम्मिलन होता है कि हम भौचक हो जाते हैं, कुछ भी समझ नहीं पाते। प्रेम भी शायद ऐसी ही घटना है ...",[1]

स्पष्ट रूप से अज्ञेय ने प्रेम के लिए अभिव्यक्ति को आवश्यक नहीं माना है। इसके साथ–ही उन्होंने प्रेम को आत्मदान और उपासना के रूप में व्यक्त किया है। यह बात उनकी सिगनेलर कहानी में देखी जा सकती है। इस कहानी में बलराज नामक युवक प्रेम को आत्मदान और उपासना का पर्याय मानकर पिछले आठ साल से आकाश में सिगनल द्वारा अपने प्रेम का संदेश देता रहा है। कहानी में लेखक इस तरह के संदेश को देखकर अचंभित हो जाता है–– "मैंने पाया कि मैं उस प्रकाश के सन्देश को साफ़–साफ़ पढ़ सकता हूँ –– मोर्स प्रणाली पर सन्देश भेजा जा रहा था –– आइ लव यू –– आइ लव यू –– आइ लव यू ...",[2]

---

[1] अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 39
[2] वही, पृष्ठ संख्या – 324

यह सन्देश संध्या के लिए भेजा रहा था। लेखक इस प्रसंग से संध्या को अवगत कराता है। संध्या को आठ साल पहले बचपन में बलराज के भेंट के सारे प्रसंग याद आ जाते हैं। अब संध्या भी बैचेनी से उस सिगनल का इंतजार करने लगती है। लेखक को लगता है कि संध्या को भी कुछ अवश्य हुआ है। वह संध्या के बारे में अनुभव करता है---

"उसकी आँखों में जो बादल छाने लगे हैं, वे कुछ महत्त्व रखते हैं। संध्या मौन है, मैं नहीं जानता कि उसके भीतर कुछ जागा है या नहीं; लेकिन इतना जानता हूँ कि वह वैसी नहीं बनीं है कि दो बार प्यार कर सके।"[1]

अचानक संदेश का आना बंद हो जाता है और कई दिनों तक नहीं आता है। तब लेखक किसी अंदेशे का अनुभव कर संध्या के साथ बलराज के पास जाता है। बलराज का अंत हो चुका होता है। बलराज जिस टॉर्च से संध्या को प्रेम–संदेश भेजा करता था, उसे अपने प्रेम के 'स्मृति चिह्न' के रूप में संध्या अपने पास रख लेती है।

इस कहानी में बलराज में प्रेम के लिए त्याग की भावना है। उसे नहीं पता कि उसका प्रेम–संदेश संध्या के पास पहुँच रहा है या नहीं, लेकिन वह लगातार कई वर्षों तक संदेश भेजता रहा है। वह चाहता तो अपने प्रेम का इजहार संध्या के पास आकर कर सकता था, लेकिन शायद इस डर से कि कहीं वह इंकार न कर दे, वह न आ सका। उसने अपने प्रेम में अपने को न्योछावर कर दिया।

इसी प्रकार के प्रेम की अभिव्यक्ति उनकी 'मनसो' कहानी में भी है। इस कहानी में भी प्रेम का अव्यक्त रूप ही दिखाई पड़ता है। इस कहानी का

---

[1] अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 328

पुरुष पात्र महेश देश की आजादी के लिए लड़नेवाला सैनिक है, जो जेल से भागकर गाँव में गुमनामी की जिन्दगी जी रहा है। वह झोपड़ी में रहता है और रोज मनसोका देखता है। वह मनसो को धीरे–धीरे अपने हृदय में स्थान देता जाता है। वह मनसो के प्रति आकर्षित है एवं उसका आकर्षण इकतरफा है। वह सोचता है––

"मनसो कुछ नहीं है। जो वास्तविकता है और जो उसकी कल्पित मनसो है, उनमें कुछ भी साम्य नहीं है। उसकी मनसो एक वातावरण है, एक स्वप्न, एक छाया जिसकी अस्पृश्यता ही उसका सौंदर्य और आकर्षण है, मनसो बाहर नहीं, उसके सामने नहीं, उसके हृदयस्थ एक चित्र है। बस!" [1]

महेश हमेशा मनसो की याद में दुखी रहता था। एक दिन मनसो उससे पूछती है–– "परदेशी, तुम इतने दुःखी क्यों दिखते हो?"[2] महेश इस प्रश्न से असमंजस में पड़ जाता है और सही जवाब नहीं दे पाता है। मनसो फिर पूछती है, महेश के जाने एक असंभव प्रश्न –– "परदेशी तुमने कभी प्यार किया है?"[3] महेश अधूरा उत्तर ही दे पाता है–– "हाँ, अनेक बार, अनेकों दिन . . . "[4] इसके बाद किसी के बुलावे पर मनसो चली जाती है और इधर महेश को भी सिपाही बन्दी बनाकर कारागार में डाल देते हैं।

कारागार में महेश सोचता है––

"कुछ हो, वह स्मृति बची है, एक सजीव कम्पन–युक्त भर्रायी हुई आवाज पूछती है, 'तुम इतने दुःखी क्यों दिखते हो?' और दो रहस्य–भरी आँखें

---

[1] अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 338
[2] वही, पृष्ठ संख्या – 341
[3] वही, पृष्ठ संख्या – 342
[4] वही, पृष्ठ संख्या – 342

असीम आत्यान्तिक भावैक्य और असीम अस्पृश्यता की दृष्टि में स्त्री–हृदय की चिरन्तन ललकार करती हैं –– 'तुमने कभी प्यार किया है?'

'कभी किया है? कभी किया है? कभी किया है?' ''[1]

इस तरह महेश अपने प्रेम का इजहार करने में असफल रहता है। ''वैसे यह एक रोमांटिक धरातल पर सम्पन्न इकतरफा प्रणय की सरल अनुभूति है –– परन्तु वेदनामयी उत्कट और चित्रमय।''[2]

अज्ञेय की एक कहानी 'ताज की छाया' में प्रेम की अमरता का वर्णन है। इस कहानी में अनन्त अपनी पत्नी ज्योति के साथ ताज देखने आया है। ताजमहल एक तरह से प्रेम को अमरत्व देने का प्रयास है। प्रेम के इसी प्रतीक को चाँदनी रात की छटा में देखने को ये दोनों इच्छुक हैं। अनन्त को कुछ कहानियाँ याद आती हैं, जिसमें अपने–अपने ढंग से प्रेम को अमर करने का प्रयास है। अनन्त सोचता है कि प्रेम को अमर बनाने के लिए क्या धन की आवश्यकता होती है; क्योंकि ताजमहल को बनाने में काफी धन खर्च हुए थे। वह सोचता है––

''क्या प्रेम को अमर बनाने के लिए धन की ही आवश्यकता है? यदि है, तो क्या है वह प्रेम!''[3]

''उसने जाना –– जाना नहीं, अनुभव किया –– कि उसका और ज्योति का प्यार इसी में अमर है कि उन दोनों ने इस विराट सौंदर्य को प्रेम के इस अमर स्मारक को साथ देखा है।''[4]

---

1 अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 343
2 कथाकार अज्ञेय – डॉ. चंद्रकांत म. बांदिवडेकर, पृष्ठ संख्या – 119
3 अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 280
4 वही, पृष्ठ संख्या – 281

अपने असीम प्रेम की अनुभूति को गहरा देने वाला एक प्रगाढ़ ज्ञान उसे हो जाता है––

"मैं अनन्त नाम का एक क्षुद्र साधनहीन व्यक्ति हूँ, कला मुझमें नहीं है, रस मुझमें नहीं है –– आत्माभिव्यंजना का साधन भी मेरे पास नहीं है, न मैं किसी साधन का उपयोग करना जानता हूँ –– क्योंकि मैं अनन्त नाम एक का क्षुद्र व्यक्ति मात्र हूँ। पर –– क्या यही मेरे लिए गौरव की बात नहीं है कि मैं कला में अपने को खो सकता हूँ, दूसरों के प्रेम में, दूसरों की साधना में निमग्न हो सकता हूँ –– मेरे लिए, और हाँ, ज्योति, तुम्हारे लिए भी गौरव की बात ...''[1]

अज्ञेय के यहाँ प्रेम किसी स्मारक का मोहताज नहीं है, वरन् एक दूसरे के प्रति आत्मसमर्पण और आत्मदान चाहता है। साथ–ही–साथ इस आत्मदान के बदले में वह कोई प्रतिदान नहीं चाहता। 'वे दूसरे' कहानी का हेमन्त नामक पात्र अपनी प्रेमिका के बारे में सोचता है, जो उससे शायद यही कहती––

"मैंने अपनी आत्मा तुम्हें दी, इसलिए मेरी देह भी तुम लो –– क्योंकि वह आत्मा का खोल है। और उसके बदले कुछ कभी देना मत चाहना, क्योंकि वह मेरे इस उपहार का अपमान है। तुम निरपेक्ष भाव से जब जो दोगे, मैं वर समझकर ले लूँगी ...''[2]

'पठार का धीरज' कहानी में प्रेम के उस स्वरूप का वर्णन है जो व्यक्ति के जीवन का स्पंदन बन जाता है और वह स्पंदन इतना तीव्र होता है कि व्यक्ति को सभी कुछ उसी की गूँज से ध्वनित प्रतीत होने लगता है। इस कहानी में

---

[1] अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 281
[2] वही, पृष्ठ संख्या – 520

किशोर और प्रमीला प्रेमी और प्रेमिका हैं। वे दोनों प्रकृति की गोद में बैठे प्रकृति की सुंदरता को देख रहे हैं। किशोर को अपनी प्रेयसी के नाम की अनुगूँज पक्षी की पुकार में सुनाई पड़ती है---

"किशोर ने धीरे से कहा, "सुनती हो, यह पक्षी क्या पुकार रहा है? वह कहता है --- प्र–मीला, प्र–मीला!"

प्रमीला निःशब्द हँस दी।

"सच, तुम सुनकर देखो --- वह देखो --- प्र–मीला, प्रमीला ---"

प्रमीला ने मानो कान देकर सुना। अब की वह जरा जोर से हँस दी, ..."[1]

किशोर और प्रमीला एक दूसरे को प्यार करते हैं तथा अपने प्यार में एक दूसरे को वास्तविक रूप में नहीं देख पा रहे हैं। इसी समय एक राजकुमारी आती है, जो पठार का धीरज का प्रतीक है। वह अपने प्रेम की कहानी उन दोनों को सुनाती है। वह बताती है कि उसका एक कुँवर था जो उसे बेहद प्यार करता था। राजनैतिक संधि के कारण उसकी सगाई किसी दूसरे व्यक्ति से हो गयी। कुँवर इस खबर से हिंसक हो गया। हेमा का मानना था कि कुँवर का प्रेम सच्चा नहीं था क्योंकि प्रेम में वर्तमान के क्षण को जीने की शर्त होती है, जबकि कुँवर हेमा को भविष्य में पाना चाहता था, अपनी वस्तु बनाना चाहता था। वह मुझसे नहीं, अपनी छाया से प्यार करता था। उसके पास धीरज नहीं था, यदि होता तो वह हिंसक नहीं बनता। वह कहती है---

---

[1] अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 530

"प्यार में अधैर्य होता है, तो वह प्रिय के आस–पास एक छायाकृति गढ़ लेता है, वह छाया ही इतनी उज्ज्वल होती है कि वही प्रेय हो जाती है, और भीतर की वास्तविकता –– न जाने कब उसमें घुल जाती है, तब प्यार भी घुल जाता है।"[1]

राजकुमारी अपनी इस वास्तविकता के बारे में बताती भी है––

"जो कुछ है सभी वास्तव है। लेकिन वास्तविकता के स्तर हैं। धीरज हमें एक साथ ही अनेक स्तरों की चेतना देता है, अधैर्य एक प्रकार का चेतना का धुआँ है जिससे बोध का एक–एक स्तर मिटता जाता है और अंत में हमारी आँखें कड़वा जाती हैं, हमें कुछ दीखता नहीं ––"[2]

वास्तव में प्यार में धीरज होता है। इस कहानी में इसी चीज को उभारा गया है। कहानी के अंत में किशोर और प्रमीला को एहसास होता है––

"नहीं यह बिलकुल आवश्यक नहीं है कि तीतर किसी का भी नाम पुकारे। पठार की अपनी एक वास्तविकता है, उनकी अपनी एक वास्तविकता है। दोनों समानान्तर हैं, सहजीवी हैं संयुक्त हैं; यह बिलकुल आवश्यक नहीं है कि वास्तविकता के अलग–अलग स्तर कहीं भी एक दूसरे को काटें। जो बोध हो, स्वयं ही हो; चेतना स्वतः उभर कर फैलकर जिस स्तर को भी छू आवे; चेतना स्वच्छन्द रहे, क्योंकि धीरज उनमें है, उनमें रहेगा ––"[3]

अब इन दोनों को लगा कि वे वास्तविक हैं और इनके पास कोई छाया नहीं है––

---

[1] वही, पृष्ठ संख्या – 534
[2] अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 534
[3] वही, पृष्ठ संख्या – 535

"और स्थिर धीरज–भरे विश्वास से जान लिया कि छाया किसी के आस–पास नहीं है, दोनों वास्तव में आमने–सामने हैं।"[1] एक सच्चे प्रेम में छाया की नहीं, वरन् धीरज की जरूरत होती है। देवी शंकर अवस्थी 'पठार का धीरज' को हिन्दी की पहली 'नयी प्रेम–कहानी' कहते हुए लिखते हैं:––

"प्रकृति की हर धड़कन में अपने ही प्रेम तथा प्रकृति की हर छवि में अपनी ही प्रिया की छवि निहारने वाले किशोर प्रेम को 'अज्ञेय' के पठार ने धीरज और विवेक देना चाहा है। रोमांटिक प्रेम ने वास्तविकता के विविध स्तरों की चेतना मिटा दी थी। प्रेम–जैसे संकुल मनोभाव को एवं प्रेम–व्यापार की संकुल प्रक्रिया को छायावादी चेतना ने एकदम सपाट झीना आवरण बनाकर सभी पर उसी का वितान तान दिया था। 'अज्ञेय' ने जब काव्य के स्तर पर इस जाल को तोड़ा तो कथा के स्तर पर भी 'वास्तविकता' पर्तों का उद्‌घाटन उद्दिष्ट बना।"[2]

अज्ञेय की कहानियों में स्त्री और पुरुष के संबंधों के बीच देशप्रेम और वैयक्तिक प्रेम को लेकर एक द्वन्द्व दिखाई पड़ता है। ऐसी कहानियों में 'अकलंक' कहानी प्रमुख है। इस कहानी में मार्टिन और क्रिस्टाबेल प्रेमी और प्रेमिका हैं। दोनों के बीच अगाध प्रेम है। मगर कहीं न कहीं दोनों के बीच ऐसा कुछ है, जिसके कारण वे एक दूसरे पर विश्वास नहीं कर पाते हैं। इस अविश्वास के कारण दोनों के प्रेम का अंत काफी दुःखद होता है।

ये दोनों देशभक्त हैं। सेनापति का आदेश है कि सभी लोग अपना घर नष्ट कर दें ताकि शत्रु के लिए कोई भी शरणस्थली न बचे, किन्तु मार्टिन

---

[1] वही, पृष्ठ संख्या – 535
[2] नयी कहानी: संदर्भ और प्रकृति, देवी शंकर अवस्थी, पृष्ठ संख्या – 157

कुछ सोचकर ऐसा नहीं करता है। इससे क्रिस्टाबेल नाराज हो जाती है तथा देशभक्ति के जोश में अपने वैयक्तिक प्रेम को कुचलकर मार्टिन को बंदी बनवाकर उसका कोर्टमार्शल करवाने पर आतुर हो जाती है। अपने इस दाँव का पता मार्टिन को भी नहीं लगने देती है।

इधर मार्टिन बाहरी शत्रु से निपटने के लिए जो योजना बनाता है, उसे क्रिस्टाबेल से अगाध प्रेम करने के बावजूद नहीं बताता है। संभव है कि वह ऐसा अपनी प्रेमिका पर सम्पूर्ण अधिकार के कारण करता हो। वह दुःखी भी है। दुःख इस बात का है कि उसकी प्रेमिका उसपर विश्वास नहीं करती। वह सोचता है कि "विराट् प्रेम का अंत भी विराट् होना चाहिए। मैं उसे अपनी व्यथा क्यों दिखाऊँ?"[1] अंतिम समय में वह अपनी प्रेमिका को प्रेम के बारे में बताता है––

"सुनो क्रिस्टाबेल, जाते हुए एक बात कहे जाता हूँ। मैं कायर नहीं हूँ, इस बात का विश्वास मैं तुम्हें उसी समय दिला सकता था; पर तुम विश्वास नहीं कर सकीं। मुझे तुमसे विश्वास की –– सहज, स्वाभाविक, अटल विश्वास की –– आशा थी। यह आश प्रत्येक मनुष्य करता है। तुम वैसा विश्वास नहीं दे सकीं। अगर प्रत्येक बात में विश्वास का पात्र होने के लिए प्रमाण देना पड़े, अगर तुम्हारा प्रेम प्राप्त करने के लिए नित्य ही यह दिखाना पड़े कि मैं उसका पात्र हूँ, तो ऐसे प्रेम का क्या मूल्य है? अगर तुम विश्वास भर कर लेतीं।"[2]

आगे इसी पत्र में मार्टिन अपनी प्रेमिका को एक नसीहत भी देता है––

---

[1] अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 64
[2] वही, पृष्ठ संख्या – 67

"दो–एक दिन में मैं नहीं रहूँगा। तब तक या उसके बाद तुम्हें 'प्रमाण' मिल जायेंगे कि मैं कायर नहीं हूँ। इसी से कहता हूँ, अगर तुम अब किसी से प्रेम करो, तो ऐसा व्यक्ति चुनना, जिसका तुम अकारण विश्वास कर सको। एक कायर से इतनी ही शिक्षा ग्रहण कर लो।"[1]

मार्टिन के पत्र से पता चलता है कि उसके हृदय को कितना गहरा जख्म लगा है। वह अपने पत्र से क्रिस्टाबेल को भी घायल कर देता है। किस्मत भी उन दोनों का साथ नहीं देती। अंतिम समय में उसकी प्रेमिका उसे बचाने के लिए जी–तोड़ मेहनत करती है, किन्तु वह सफल नहीं हो पाती। स्पष्ट है, प्रेम में विश्वास की भूमिका अहम होती है, नहीं तो प्रेम ज्यादा दिन तक स्थायी नहीं रह पाता।

देश-प्रेम और वैयक्तिक-प्रेम की एक कहानी 'हारिती' भी है। हारिती सुन्दर नहीं थी। क्वानयिन उससे प्रेम करने लगा। हारिती के प्रेम में क्वानयिन अपने आपको बलिदान भी कर देता है। हारिती भी अपने प्रेम का बलिदान कर देती है। यहाँ भी देश-प्रेम है, जिसके कारण वे दोनों अपने प्रेम के साथ न्योछावर हो जाते हैं।

'अंगोरा के पथ पर' कहानी में भी इसी तरह के प्रेम का वर्णन है। इस कहानी में अज्ञेय ने युद्ध की विभीषिका के बीच एंटनी स्टेटास, उसका मित्र कार्ल और एंटनी की प्रेमिका आरोरा के संबंधों के अंतर्द्वन्द्व का चित्र खींचा है। एंटनी और आरोरा दोनों एक–दूसरे को बहुत प्यार करते हैं। कुछ ऐसी स्थितियाँ बनती हैं कि एंटनी को अपनी प्रेमिका आरोरा से कार्ल के साथ स्मर्ना से बाहर जाने के लिए

[1] अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 67

कहना पड़ता है। इन दोनों को एंटनी के पासपोर्ट पर जाना होता है। आरोरा अपने प्रेम को छोड़कर नहीं जाना चाहती है। एंटनी तर्क देता है––

"आरोरा, तुम अन्याय मत करना –– अभी हमारे पास झगड़ने का समय नहीं है। अभी थोड़ी देर तक तुम मुझे अपना टोनी मत समझो –– समझ लो कि मैं केवल एक ग्रीक सैनिक हूँ। और तुम मेरी आरोरा नहीं –– ग्रीस की एक वालंटियर हो ... फिर बताओ, तुम क्या ग्रीस को छोड़ दोगी?"[1]

आरोरा इस कड़वे आदेश को स्वीकार करती है। अब उसका रूख एंटनी से विद्रोह का हो जाता है। वह कहती है कि मैं जाने से पहले कार्ल से विवाह करूँगी। वह ऐसा निर्णय इस लिए लेती है कि पासपोर्ट के अनुसार उसकी और एंटनी की सगाई हो चुकी है। वह कहती है–– "एंटनी की प्रेमिका कार्ल के प्रति प्रणयिनी का व्यवहार नहीं करेगी।"[2] यह कदम आरोरा अपने प्रेमी के इस पीड़ादायक व्यवहार के कारण उठाती है। एंटनी के पीड़ादायक व्यवहार के कारण आरोरा को हिस्टेरिया के दौरे आते हैं। कार्ल के साथ विवाह करने की जिद एंटनी के लिए भी दुःखदायी है।

इस कहानी में जिस तरह देश के हित में एक प्रेम कहानी का दुःखद अंत होता है, उसी तरह इन तीनों का भी दुःखद अंत होता है। कार्ल जो एंटनी के नाम से यात्रा कर रहा था, मिटिलीनी के विद्रोह के समय हवाई जहाज के गिर जाने से मर गया। आरोरा गोलियों से भून दी गयी और एंटनी तुर्कों का युद्धबंदी बन गया।

---

[1] अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 175
[2] वही, पृष्ठ संख्या – 177

अज्ञेय व्यक्ति के मानस की उलझनों को पकड़ पाने में समर्थ हैं। यही कारण रहा है कि स्त्री–पुरुष संबंधों के बीच की उलझनों की अभिव्यक्ति उनकी कहानियों में सशक्त रूप से हो सकी है। प्रेम को जहाँ एक नया अर्थ मिला है, वहीं प्रेम नहीं पा सकने की स्थिति के फलस्वरूप उत्पन्न हुए व्यवहारों का भी चित्रण है। 'हीली– बोन की बत्तखें' इसी प्रकार की कहानी है। इसमें एक स्त्री की गहरी संवेदना और उसके मन की उलझनों का वर्णन है। उसके जीवन में एक पुरुष के अभाव के उपरांत की रिक्तता का वर्णन है।

हीली 34 साल की हो गयी है। वह अपनी दोनों बहनों से सुंदर है, मगर उसके जीवन में रिक्तता है। ऐसा नहीं है कि उसने कभी प्यार नहीं पाया था–– "बहुत ––कुछ था –– प्यार उसने पाया था और उसने सोचा भी था कि––"[1] संभव है किसी कारणवश बात आगे न बढ़ी हो। अब वह अकेली है और अपना अकेलापन दूर करने के लिए उसने बत्तखें पाल ली हैं। इधर कुछ दिनों से उसके बत्तखों का शिकार एक नर लोमड़ी करने करने लगा था। वह इस घटना से काफी आहत थी। अचानक राह चलते समय कैप्टन दयाल ने उसकी चीख सुनी। हीली के मुख से बत्तखों के मारे जाने की घटना सुनने के बाद वह हीली की सहायता करने के लिए तैयार हो गया। कैप्टन दयाल सेना में इंजीनियर था। कैप्टन दयाल के पूछने पर कि "आपका मकान बहुत साफ और सुन्दर है"

हीली ने एक रूखी–सी मुस्कान के साथ कहा, "हाँ, कोई कचरा फैलानेवाला जो नहीं है, मैं यहाँ अकेली रहती हूँ।"[2]

---

[1] अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 539
[2] वही, पृष्ठ संख्या – 537

हीली के द्वारा दिया गया यह जवाब उसके जीवन के सूनेपन को व्यक्त करता है। अक्सर लोग भी कहा करते थे –– "हीली सुन्दर है, पर स्त्री नहीं है। वह बांबी क्या, जिसमें साँप नहीं बसता?"[1]

वास्तव में हीली अपनी स्थिति से दुःखी थी। निश्चय ही यह दुःख उसके परिवार के न बस पाने का था।

जब कैप्टन दयाल उस बत्तखखोर लोमड़ी को मार देता है। तब "हीली ने स्थिर दृष्टि से देखा। करारे में मिट्टी खोद कर बनायी हुई खोह में –– या कि खोह की देहरी पर –– नर लोमड़ी का प्राणहीन आकार दुबका पड़ा था –– कास के फूल की झाड़ू–सी पूँछ उसकी रानों को ढक रही थी, शव के सिर के पास मुँह किए, मानो उसे चाटना चाहती हो और सहम कर रूक जाती हो। लोमड़ी के पाँव से उलझते हुए तीन छोटे–छोटे बच्चे कुनमुना रहे थे। उस कुनमुनाने में भूख की आतुरता नहीं थी; न वे बच्चे लोमड़ी के पेट के नीचे घुसड़–पुसड़ करते हुए भी उसके थनों को ही खोज रहे थे।"[2]

यह दृश्य देखकर हीली की संवेदना आहत हुई। उसने इस घटना के दोषी अपने ग्यारह बत्तखों की गर्दन मरोड़कर हत्या कर दी। साथ ही लोमड़ी को मारकर उसकी सहायता करनेवाले कैप्टन को भी उसने हत्यारा कहकर सम्बोधित किया। वास्तव में हीली के द्वारा अचानक किए गए इस व्यवहार का कारण वे ग्रंथियाँ हैं जो उसके विगत जीवन के उतार–चढ़ाव के फलस्वरूप उसके मन में बन गयी हैं। वह निःसंतान, अकेली और प्यार से वंचित है। इसी कारण वह सन्तान

---

[1] अज्ञेय की संपुर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 539
[2] वही, पृष्ठ संख्या – 541

और प्यार के महत्व को समझती है। लोमड़ी का घर उजड़ने से उसे लगता है कि उसका ही घर उजड़ गया है।

"हीली–बोन की बत्तखें मनोवैज्ञानिक आशय से समृद्ध कहानी है जिसमें मनुष्य जीवन में गृहस्थ जीवन की अर्थात् घर की प्रचंड आवश्यकता और उसके अभाव में पैदा होने वाली निरर्थक रिक्तता का संकेत है।"[1]

अज्ञेय ने अपनी कहानियों में एक ओर जहाँ पुरुष के बिना स्त्री के जीवन की रिक्तता का वर्णन किया है, वहीं दूसरी ओर स्त्री के अभाव में पुरुष के जीवन को भी निराधार बताया है। 'हरसिंगार' इसी प्रकार की कहानी है। गोविन्द के जीवन में स्त्री नहीं है। इस कहानी में गोविन्द के जीवन में एक बार कुछ क्षणों के लिए एक रोगिणी स्त्री के आने के बाद की स्थितियों का वर्णन है। गोविन्द अनाथ है और अनाथालय में रहता है। उसका काम अपने कुछ साथियों के साथ मिलकर लोगों को गाना सुनाना और भीख माँगना था ताकि अनाथालय के लोगों का पेट भर सके।

आज से 20 साल पहले एक बार गोविन्द एक रोगिणी लड़की के घर गाना गाने जाता है। उस लड़की को देखकर उसके मन में स्त्री संबंधी तरह–तरह की भावनाएँ जागती हैं। गोविन्द को जब गाना गाने के लिए कहा गया तो कोई नया स्वर नहीं निकला–– इस चीज का उसे अभी भी दुःख है। उसे उस रोगिणी के द्वारा हरसिंगार की माला दी गयी थी, जिसे उसने आज तक सँभालकर रखा है। पता नहीं वह रोगिणी युवती जिन्दा है भी या नहीं, लेकिन गोविन्द के जीवन में आयी उस युवती का ही परिणाम था कि गोविन्द ने सच्चाई को जाना––

[1] कथाकार अज्ञेय, डॉ. चंद्रकांत म. बांदिवडेकर, पृष्ठ संख्या – 185

"स्त्री के बिना कुछ भी अच्छा नहीं है, कुछ भी मधुर नहीं है, कुछ भी मृदुल नहीं है, कुछ भी सुन्दर नहीं है, स्त्री –– जो केवल स्त्री ही नहीं, संसार की कुल सुन्दर और मधुर वस्तुओं की प्रतिनिधि है ···।"[1]

जीवन में एक बार आयी उस रोगिणी युवती के कारण गोविन्द के जीवन के सारे प्रसंग बदल जाते हैं। वह सोचता है––

"एक ही बार स्त्री ने उसके जीवन में पैर रखा, वहीं पद–चिह्न की तरह पड़ी है फूलों की एक माला; तब क्या आगे के इस विराट् अन्धकार में एक भी किरण नहीं है; इस मरुस्थल में, जिसे उसने बताया, क्या एक भी कली न खिलेगी! वहाँ बाहर, सड़क पर, गलियों में, क्या एक भी घर नहीं होगा, एक भी स्त्री–मुख, एक भी मधुर पुकार –– अनाथ जीवन की इस विषैली रिक्तता को भरने के लिए एक भी स्मृति, हरसिंगार का एक भी फूल?"[2]

चाहे वह पुरुष हो या स्त्री। दोनों का एक दूसरे के लिए होना आवश्यक है। 'जिजीविषा' कहानी में इसी चीज को दिखाया गया है। यह एक संथाल लड़की की कहानी है। उसके माँ–बाप मर गये हैं और वक्त के थपेड़े ने उसे सड़क पर ला खड़ा कर दिया है। तन ढकने के लिए कपड़े नहीं हैं और पेट भरने के लिए भी एक मात्र साधन भिक्षाटन ही है। स्थिति काफी दयनीय है, पर स्वाभिमान और लालसा चरम सीमा पर है। स्वाभिमान भीख माँगने से रोकता है और लालसा एक सुनहरे भविष्य की ओर इंगित करती है। लालसा केवल पेट तक ही सीमित नहीं है, अपितु उससे भी आगे की चीजों, सृष्टि के विभिन्न पहलुओं तक है। जैसाकि अक्सर

---

[1] अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 246
[2] वही, पृष्ठ संख्या – 246

उम्र की परिपक्वता के साथ शरीर की कुछ अन्य इच्छाएँ भी जाग्रत होती जाती हैं। अज्ञेय ने इस कहानी में स्त्री–पुरुष संबंधों के इसी रूप को उजागर किया है। इच्छाएँ किसी भी परिस्थिति में समाप्त नहीं होती हैं। ये इच्छाएँ इस कहानी में दिखती हैं––

"वह चाहती थी कि, अच्छी तरह साफ–सुथरे इन्सान की तरह जीवन बिताये, चाहती थी कि उसका अपना घर हो, जिसके बाहर गमले में दो फूल लगाये और भीतर पालने में दो छोटे–छोटे बच्चों को झुलाये, और चाहती थी कि कोई और उस पालने के पास खड़ा हुआ करे, जिसके साथ वह उन बच्चों को देखने का सुख और अपने हाथ का सेका हुआ टुक्कड़ बाँटकर भोगा करे –– कोई और जो उसका अपना हो –– वैसे नहीं, जैसे मालिक कुत्ते का अपना होता है, वैसे जैसे फूल खुशबू का अपना होता है। अब तक यह सब हुआ नहीं था; लेकिन बातरा जानती थी कि वह होगा, क्योंकि बातरा अभी जवान है, और उस कीच–कादों में पल रही है, जिससे जीवन मिलता है, जीवन–शक्ति मिलती है···।"[1]

इस कहानी में आत्म–भाव की भी प्रतिष्ठा है, तभी तो वह अपने को कुत्ते से बेहतर मानती है। बातरा अपने स्वप्न में अपनी इच्छाओं को एक आकृति देते हुए एवेन्यू की पटरी पर टहलती जा रही है––

"उसकी आँखें एक आदमी की आँखों से मिलती हैं जो उसकी ओर जाने कब से देख रहा है, अटकती हैं, हट जाती हैं और फिर मिल जाती हैं। अब की बार उसमें एक उद्दण्डता–सी है, मानो कह रही हो, तुम नहीं हटाते, तो मैं ही क्यों हटाऊँ ? मुझे काहे की लज्जा ?"[2]

---

[1] अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 432
[2] वही, पृष्ठ संख्या – 432

यह व्यक्ति कोई और नहीं बल्कि दामू है, जो बाद में उसका प्रेमी बनता है। इस कहानी में एक ओर जहाँ बतरा को एक साथी की जरूरत है वहीं दामू को भी एक साथी की जरूरत है। दोनों का साथ होना कहानी की दृष्टि से कुतूहल का विषय हो सकता है, पर वास्तविकता की दृष्टि से यह दोनों की आवश्यकता है–– कहीं न कहीं साथ रहने का, एक परिवार बसाने और देखे गये सपनों को संजोने का। स्त्री–पुरुष संबंधों में कुछ चीजें ऐसी होती हैं जो अमीर और गरीब के पैमाने को नहीं मानतीं। अमीरी और गरीबी के आधार पर इस संबंध में कोई असमानता नहीं है। प्रेम का प्रस्फुटन और उसकी अभिव्यक्ति सभी स्तर के व्यक्तियों में एक समान ही होती है। अज्ञेय ने इस मर्म को पकड़ा है और अपनी कहानी 'जिजीविषा' में इसे अभिव्यक्त भी किया है। बातरा और दामू भले ही आर्थिक रूप से सम्पन्न न हों, लेकिन प्रेम के मामले में सम्पन्न हैं।

धीरे–धीरे उनकी गृहस्थी बस जाती है–– उसी एवेन्यु की पटरी पर। वे किसी तरह एक घर भी बना लेते हैं और उन्हें एक बेटे की भी प्राप्ति होती है। लेकिन आस–पास के लोगों की नजर लग जाती है। लोगों की शिकायत पर कारपोरेशन का इन्स्पेक्टर बातरा का घर उजाड़ देता है। पुलिस बातरा को जेल ले जाती है। वहाँ वह अपने बच्चे को खो देती है। उसका घर उजड़ जाता है, लेकिन लालसा मरी नहीं है, जीवन समाप्त नहीं हुआ है, स्वप्न अभी भी जावित है:––

"वह फटी–फटी सी, दृष्टिहीन–सी आँखों से बिछते हुए कागजों की ओर देखती जाती है, ऐसे मानो आँखें बाहर की ओर नहीं; भीतर की ओर देख रही हों, जहाँ उसमें दुर्बल, असहाय, लेकिन नया जीवन छटपटा रहा है; जहाँ

एक अदम्य जीवन–शक्ति नींद में भी तड़प उठती है अकथनीय सपने देखकर –– दरवाजे के आगे दो छोटे–छोटे फूल–भरे गमले, भीतर पालने में दो छोटे–छोटे बच्चे, और बातरा के पास एक और –– कोई एक और ''' ''[1]

इस कहानी में एक ऐसे संबंध का रूप भी दीखता है, जिसमें बिना विवाह की प्रथा के आगमन के ही स्त्री–पुरुष साथ रहते हैं और एक परिवार की शक्ल देते हैं। अज्ञेय ने अपनी कहानियों में विवाह से संबंधित कुछ महत्त्वपूर्ण सवाल उठाये हैं। 'वे दूसरे' कहानी का नायक हेमन्त इस संबंध में कहता है––

"प्यार जहाँ है वहाँ हो, और विवाह ''' विवाह तो सामाजिक सम्बन्ध है, व्यक्ति के जीवन में यह बाधक हो ही, ऐसा क्यों?"[2]

"क्या यह बहुत बड़ा स्वीकार नहीं है ? किन्तु कैसी अद्‌भुत है, यह बात कि जिसकी आत्मा हम दूसरों को सौंपने को तैयार हैं –– क्योंकि उसके ब्याह की बात स्वीकार करते हैं –– उसी की देह को सौंपते क्यों हमें इतना क्लेश होता है ? दूषित या भ्रष्ट क्या देह होती है, या मन –– आत्मा ? या कि देह को हम देख, छू, सकते हैं, बस, इतनी–सी बात है ?"[3]

अज्ञेय के यहाँ शरीर की पवित्रता का प्रश्न बना हुआ है। 'पहाड़ी जीवन' कहानी में गिरीश नामक पात्र एक जगह कहता है––

"हम क्यों एक शारीरिक पवित्रता को इतना महत्व देते हैं, विशेषतया जब कि वह पवित्रता एक कृत्रिम बन्धन है? हम एक ओर तो मानते हैं कि कृत्रिम बन्धन सब प्रकार के पतन के मूल हैं, दूसरी ओर हम यह भी मानते हैं कि

---

[1] अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 438
[2] वही, पृष्ठ संख्या – 519
[3] वही, पृष्ठ संख्या – 520

पवित्रता, व्रत–निष्ठा एक मानसिक या आध्यात्मिक तथ्य है, शारीरिक नहीं; तब फिर क्यों हम एक नकारात्मक शारीरिक पवित्रता को इतना महत्व देते हैं कि उसके न होने पर किसी व्यक्ति को नरक का पात्र समझने लग जाते हैं ? और विशेषतया स्त्री को?''[1]

वास्तव में समाज में नकारात्मक शारीरिक पवित्रता का महत्त्व है और यही कारण है कि विधवा स्त्रियों की स्थिति नाजुक हो जाती है। ऐसा अक्सर स्त्रियों के साथ ही होता है। औरतों के पति के मर जाने पर उन्हें अपवित्र मान लिया जाता है जबकि पुरुषों की पत्नी के मर जाने पर ऐसा नहीं होता है। विधवा विवाह के योग्य नहीं रह पातीं जबकि विधुर विवाह के योग्य ही रहते हैं। वे पत्नी के मरने पर शारीरिक रूप से अपवित्र नहीं होते। कहीं न कहीं यह प्राचीन समय से चली आ रही पुरुष के द्वारा स्थापित विचार है, जो स्त्रियों को भोग्यवस्तु की संज्ञा देता है। स्त्रियों की इस स्थिति का 'पहाड़ी–जीवन' कहानी में वर्णन है––

''इस देश में स्त्री होकर जन्म लेना मृत्यु–यंत्रणा से भी बढ़ कर रही है। मृत्यु तो यंत्रणाओं से छुटकारा दे देती है; किन्तु यह जन्म स्वयं समस्त यंत्रणाओं का मूल है। आप इसे गौरव समझें या साहस; किन्तु उन्हें जीना पड़ता है। और वे कहीं से तनिक–सी सहानुभूति पा लें, तो उसके दाता के हाथ मानो बिक जाती है, बाजारू कुत्ते की भाँति वे अपना यह अधिकार भी नहीं समझतीं कि उन्हें सहानुभूति मिलें! इस प्रकार वे कब कितना धोखा खाती हैं, पतन की ओर कैसे बढ़ती जाती हैं, पतन की ओर कैसे बढ़ती जाती हैं, समझ नहीं पातीं। समझें कैसे? निचाई

---

[1] वही, पृष्ठ संख्या – 226

का अनुभव वे कर सकते हैं, जिन्होंने कभी ऊपर उठ कर देखा हो; पर हम स्त्रियाँ तो सदा से दलित हैं।"[1]

हकीकत में स्त्रियाँ पुरुषों के कारण ही इस स्थिति में हैं। अज्ञेय ने इसके लिए पुरुष को दोषी माना है। यह उनकी कहानियों से स्पष्ट होता है। अज्ञेय ने विवाह संबंधी प्रश्न उठाये हैं, किन्तु कहीं भी वे विवाह जैसी संस्था के विरोधी नहीं दिखते हैं। स्वाभाविक है कि यह एक पवित्र संस्था है, जिसके अंतर्गत् स्त्री और पुरुष एक दूसरे में बँधकर अपने जीवन की नई शुरुआत करते हैं। संभव है कि इस बंधन में बँधने के बाद स्त्री और पुरुष वैसे न रह सकें हों जैसे पहले थे। स्त्री–पुरुष के दाम्पत्य–जीवन की ओर अज्ञेय का ध्यान गया है। उन्होंने इस जीवन को लेकर स्त्री–पुरुष की मानसिक उलझनों का बड़ी गहराई के साथ वर्णन किया है। आमतौर पर दाम्पत्य–जीवन में जो नीरसता आ जाती है, उसका जिक्र इनकी कहानियों में मिलता है। स्त्री और पुरुष किस प्रकार नीरसता के माहौल में उबाऊ जीवन जी रहे हैं –– इसकी अभिव्यक्ति इनकी कहानियों में देखी जा सकती है।

'अलिखित कहानी' में दाम्पत्य–जीवन की नीरसता का वर्णन है। इस कहानी का पुरुष पात्र लेखक इस चीज को मानता है और अपने और अपनी पत्नी के जीवन की नीरसता को इस प्रकार व्यक्त भी करता है––

"मैं कोई बड़ा आदमी नहीं हूँ –– पता नहीं, आदमी भी हूँ कि नहीं! –– मैं हिन्दी का कहानी–लेखक हूँ। और मेरी गृहलक्ष्मी एक हिन्दी लेखक की गृहलक्ष्मी है –– हिन्दी लेखकों का और किसी लक्ष्मी से परिचय ही कब होता है ?

---

[1] अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 223

हम दोनों का जीवन बिलकुल नीरस है। इसके अलावा कुछ हो भी नहीं सकता। और इसलिए हमारी लड़ाई अवश्यम्भावी है।"[1]

"क्योंकि मैं कभी–कभी यत्न करता हूँ, अपनी कहानी के 'एटमास्फियर' द्वारा उस नीरसता को दूर कर दूँ जो हमारे जीवन में समा रही है। पर मेरी पत्नी यह नहीं कर सकती, उसका जीवन उस नीरसता में, गृहलक्ष्मी की सामान्य दिनचर्या में ऐसा जकड़कर बँधा हुआ है कि वह हिल–डुल भी नहीं सकती –– अगर कभी हिलने की चेष्टा करे तो उसी दिन हम दोनों को रोटी न मिले –– घर में चुल्हा ही न जले ... और मैं कभी यह भी यत्न करता हूँ कि अपने को कहानी के 'एटमास्फियर' में न भुलाकर कहानी का 'एटमास्फियर' ही घर में ले आया जावे, ताकि हम दोनों उसका रस ले सकें, किन्तु तब लड़ाई हो जाती है ...।[2]"

इस कहानी में लेखक अपने दाम्पत्य–जीवन से दुःखित है। उसकी पत्नी तो भारतीय परंपरा के अनुसार घर की लक्ष्मी अर्थात् घर के सभी कामों को करने वाली है। लेखक की विवशता यह है कि वह अपने लेखन–कार्य में ही व्यस्त है। दोनों अपनी–अपनी स्थितियों से जकड़े हुए हैं और उस जकड़न में जीने को मजबूर हैं। लेखक अपनी स्थिति के बारे में सोचते–सोचते सो जाता है और स्वप्न में ही तुलसीदास और तुलसू की कहानी पढ़ने लगता है।

तुलसीदास और तुलसू की कहानी में स्त्री–पुरुष संबंधी कई प्रसंग आते हैं, जो महत्त्वपूर्ण हैं। तुलसीदास और तुलसू एक ही गाँव के दो अलग–अलग घरों में जन्म लेते हैं, लेकिन वे रंग, रूप और आकृति में एक जैसे हैं।

---

[1] अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 230
[2] वही, पृष्ठ संख्या – 230

दोनों की रूचि साहित्य की ओर थी। संयोग से उनकी शादी भी एक ही गाँव में होती है और उनकी पत्नी भी दो अलग–अलग घर में जन्म लेकर भी एक जैसी नहीं थीं। तुलसीदास और तुलसू अपनी–अपनी पत्नी को बेहद प्यार करते हैं। दो–चार दिन पहले मायके गयी पत्नियों को वे दोनों अपने प्यार के वशीभूत होकर घर लिवाने के लिए ससुराल चले जाते हैं। पत्नियाँ दुःखित होती हैं और उन दोनों को फटकार लगाती हैं। वे दोनों वहाँ से चले जाते हैं–– तुलसीदास ईश्वर–सेवा का व्रत लेकर निकल पड़ता है और तुलसू अपने ही घर में रह जाता है। इस कहानी में वर्णन है––

"पुरुष प्रेम की स्वाभाविक गति है स्त्री की ओर, किन्तु जब वह चोट खाकर उधर से विमुख हो जाता है, तब वह कौन–कौन–से असंभव कार्य नहीं कर दिखाता ···।"[1]

आगे इसी में वर्णन है––

"किन्तु वह तभी, जब उसे इसके अनुकूल क्षेत्र मिले। ऐसा भी होता है कि वह चेष्टाएँ करके रह जाता है, स्त्री से विमुख होकर भी वह अपने को ऐसा आबद्ध पाता है कि और किसी ओर जा नहीं पाता, बढ़कर मर जाता है।"[2]

एक ओर जहाँ तुलसीदास ने स्त्री से विमुख होकर महाकाव्य की रचना कर डाली, वहीं दूसरी ओर तुलसू ने अपने को गृहस्थ–जीवन में उलझाकर, घर को चलाने के लिए माँग के अनुसार गाना लिखकर अपनी नैसर्गिक साहित्यिक प्रतिभा को खो डाला, जिसके फलस्वरूप उसे आत्महत्या करना पड़ा। एक ओर जहाँ

---

[1] अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 231
[2] वही, पृष्ठ संख्या – 231

तुलसीदास ने अपनी पत्नी का नाम अपने साथ अमर कर डाला, वहीं तुलसू कुछ न कर सका।

लेखक नींद में यह कहानी पढ़ता है, लेकिन यह कहानी उसके जाग्रत विचारों का एक प्रक्षेपण है। वह भी तुलसू की तरह होकर कुछ नहीं कर सका है और गृहस्थी भी ठीक ढंग से नहीं चल पा रही है। गृहस्थ–जीवन में नीरसता का माहौल व्याप्त है। न वह ही अपने जीवन से खुश है और न ही उसकी पत्नी। आखिर इस नीरसता का कारण क्या है ?

क्या जीवन इतना नीरस होता है या विवाह जैसी संस्था में व्यक्ति के बंध जाने पर ऐसा होता है। विवाह से पहले जो व्यक्ति स्वच्छंद होता है, वही विवाह के बाद कैसे नीरस हो जाता है ? कहीं ऐसा तो नहीं कि विवाह के बाद की जिम्मेदारियाँ व्यक्ति को नीरस बना देती हैं। संभव है, ऐसा हो। दाम्पत्य–जीवन में नीरसता का माहौल बनाने में केवल पुरुष ही जिम्मेवार हैं या स्त्रियाँ भी। हो सकता है कि कहीं पुरुष जिम्मेवार हो तो कहीं स्त्री भी। अज्ञेय का ध्यान इन सभी तथ्यों की ओर गया है। उन्होंनें अपनी कहानियों में नीरसता के इन सभी कारणों का उल्लेख किया है। दाम्पत्य जीवन में नीरसता के माहौल का अद्‌भुत वर्णन उनकी 'रोज' कहानी में देखने को मिलता है।

'रोज' कहानी में मालती के जीवन में एक गहरी दृढ़, एक मौन प्रलम्ब वेदना छा गयी है। उसकी मनोव्यथा का चित्रण अज्ञेय ने काफी गहराई के साथ किया है। यहाँ पर पति–पत्नी का परंपरागत संबंध है, जिसमें आनंद के सिवाय कर्त्तव्य ही सबकुछ है।

मालती के विवाह के अभी दो वर्ष हुए थे, परन्तु उसकी स्थिति को देखकर लेखक चिंतित हो जाता है। लेखक ने जिस समय मालती को देखा था, उस समय वह क्या रही होगी और अब क्या हो गयी। लेखक मालती की स्थिति को देखकर सोचता है––

"यह मैंने अभी तक सोचा नहीं था, किन्तु अब उसकी पीठ की ओर देखता हुआ मैं सोच रहा था, कैसी छाया इस घर पर छायी हुई है ··· और विशेषतया मालती पर ···।"[1]

मालती का पति महेश्वर डॉक्टर है। वह हमेशा घर अपने काम के कारण देर से आता है और इस समय तक मालती भूखी रहती है। लेखक के पूछने पर कि इससे तो उसे कष्ट होता होगा, वह कहती है "ऊँहूँ, मेरे लिए तो यह नयी बात नहीं है ··· रोज ही ऐसा ही होता है ···"[2] बच्चे के रोने का कारण पूछने पर मालती कहती है–– "हो ही गया है चिड़चिड़ा–सा, हमेशा ऐसा ही रहता है।"[3] पानी के नहीं होने पर वह कहती है–– "रोज ही होता है ··· कभी वक्त पर तो आता नहीं,"[4] अपने पति के द्वारा लेखक को ग्रैंग्रीन बीमारी के कारण एक व्यक्ति का पैर काटे जाने की कहानी सुनाने पर वह बोलती है–– "मैं तो रोज ही ऐसी बातें सुनती हूँ!"[5] रात में बच्चे के गिर जाने पर वह बोलती है–– " इसके चोटें लगती ही रहती हैं, रोज ही गिर ही पड़ता है।"[6]

---

[1] अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 208
[2] वही, पृष्ठ संख्या – 209
[3] वही, पृष्ठ संख्या – 209
[4] वही, पृष्ठ संख्या – 210
[5] वही, पृष्ठ संख्या – 212
[6] वही, पृष्ठ संख्या – 214

लेखक महसूस करता है कि मालती के किसी काम में कोई उल्लास नहीं है। जीवन नीरस हो गया है और शुष्क यंत्र की भाँति चल रहा है। वह सभी चीजों को यंत्रवत् सहन करने की आदी हो गयी है। मालती के दाम्पत्य–जीवन में खड़कनेवाली घड़ी की ध्वनि और मालती के रोजमर्रा के काम –– इसके अतिरिक्त वहाँ कुछ था ही नहीं। मालती के लिए बच्चे का गिरना, चोट खा जाना, चिन्ता की बात नहीं, रोज की बात हो गयी है। कहीं न कहीं मालती भी अपने बच्चे के प्रति उदासीन होकर एवं अपने जीवन के आनंद के श्रोत सुखाकर अपने नीरस पति से बदला लेना चाहती है।

प्रायः दाम्पत्य–जीवन में इस प्रकार की समस्या आती है। अज्ञेय ने इस मर्म को पकड़ा है और उसे अपनी कहानियों के माध्यम से व्यक्त भी किया है। उनकी 'वसंत' कहानी में भी गृहस्थ–जीवन के उबाऊपन का चित्रण है। इस कहानी में मालती का काम उसके पति की नजर में कोई मायने नहीं रखता है। तभी तो वह कहती है––

"थकते तो मर्द हैं, स्त्री कभी नहीं थकती है। काम और विश्राम –– यह मर्द की ईजाद है। स्त्रियाँ विश्राम नहीं करतीं, क्योंकि वे शायद काम नहीं करतीं। वे कुछ करतीं ही नहीं ··· वे शायद होती ही हैं। बालिका से किशोरी, कुमारी से पत्नी, बेटी से माँ, एक निस्संग आत्मा से परिगृहित कुनबा –– वे निरन्तर कुछ–न–कुछ होती ही चलती हैं। क्योंकि वे हैं कुछ नहीं, वे केवल होते चलने का कारण, बनने में नष्ट होते चलने का, या कि कह लो, नष्ट हाते रहने में बनने का

दूसरा नाम हैं, वे भविष्य हैं जो कि पीछे छूट गया, एक अतीत हैं जो कि आगे मुँह बाये बैठा है . . .''[1]

मालती अपने पति से खुश नहीं है। अब उसे अपने जीवन में कोई उल्लास नहीं दीखता है। उसे अब यह भी याद नहीं कि दाम्पत्य–जीवन में उसने कभी कोई सुनहरे पल बितायें हो । जैसे लगता है, उसके जीवन के आनंद के सभी श्रोत सूख गये हों। अब वसंत जैसा उल्लास जीवन में नहीं रह गया है। इस बात से उसका पति भी वाकिफ है, तभी तो वह मालती से कहता है––

''मालती, क्या तुम सुखी नहीं हो ? (पीड़ित–सा) लेकिन शायद मेरा यह पूछना भी अमान्य है। मैं तुम्हें कुछ दे भी तो नहीं सका। यह तो नहीं कि मैंने चाहा नहीं। लेकिन चाहना ही तो काफी नहीं, सकत भी तो चाहिए।''[2]

पति को इस बात का एहसास है कि मालती को वह सुखी नहीं रख सका है। शादी से पहले मालती ने भी कई स्वप्न देखें होगे, परन्तु वह अतीत हो गया है। इस कहानी में स्त्री की दो अवस्थाओं का वर्णन है। एक तो तब जब वसंत ऋतु के समान नारी के पास यौवन का रंग, गंध, रूप, सौंदर्य होता है, दूसरा अब जब यह सब समाप्त हो चुका है और पारिवारिक जिम्मेदारियाँ आ गयी हैं। इस अंतिम पड़ाव में मालती अनुभव करती है कि उसका वह यौवन काल समाप्त हो चुका है और उसका स्थान उसका बेटा वसंत ले रहा है। वह कहती है––

''सबसे अच्छा वसन्त तू है, बेटा। तू हँसता रह, फूल फल . . .''[3]

---

[1] अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 591
[2] वही, पृष्ठ संख्या – 591
[3] वही, पृष्ठ संख्या – 592

गृहस्थ–जीवन में स्त्री–पुरुष के एक–दूसरे को सही ढंग से नहीं समझ पाने से समस्या होती है। एक दूसरे की भावनाओं और इच्छाओं को समझने का प्रयास किया जाये तो जीवन सुखद हो सकता है, परन्तु इस तरह का प्रयास कम ही हो पाता है। अज्ञेय की एक कहानी है 'कविप्रिया'। इस कहानी में कवि की पत्नी के दुःख का वर्णन है। पति प्रेम की कविता लिखता है और घर में कवि की पत्नी शान्ता अपने पति के प्रेम से ही वंचित है। शान्ता में अपने पति को लेकर उदासी है––

"एक बार घर से निकले तो कब लौटेंगे यह भगवान् भी नहीं बता सकते। मालती कह रही थी न, जहाँ न जाये रवि, तहाँ जाये कवि ? सो रवि सुबह का निकला साँझ को घर लौटता ही है, पर कवि का क्या ठिकाना!"[1]

शान्ता अपनी स्थिति से आहत है और इस पर वह नाराजगी भी व्यक्त नहीं कर सकती। तभी तो वह अपने मित्रों से कहती है––

"मैं गुस्सा करूँ तो वह दुगुना गुस्सा करेंगे। रूठा वहाँ जाता है जहाँ कोई मनानेवाला हो –– जैसे माँ के साथ ··· माँ के साथ मैं भी बहुत रूठा करती थी ···(सहसा खिलखिलाकर) दीवार के साथ और कवि के साथ भी भला रूठा जाता है ?"[2]

ऐसी विकट स्थिति में इस कविप्रिया का सहारा उसका बेटा ही है। वह अपने गृहस्थ जीवन से ज्यादा खुश नहीं है क्योंकि उसके कवि व्यक्तित्व वाले पति अपने गृहस्थ जीवन पर, खासकर शान्ता पर ध्यान नहीं देते और

---

[1] अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 564
[2] वही, पृष्ठ संख्या – 564

शान्ता आशा भरी नजर बनाये रहती है। गुनगुनाती है अपने जीवन की स्थिति को लेकर––

"सखी, मेरी नींद नसानी हो!

पिया को पन्थ निहारते सब रैन बिहानी हो,"[1]

अज्ञेय के यहाँ केवल स्त्री और पुरुषों के बीच के मानसिक तनाव का वर्णन नहीं है, अपितु इन दोनों का एक दूसरे के कामों में बढ़–चढ़कर साथ देने का उत्साह भी है। 'एक घंटे में' कहानी में रजनी और प्रभाकर के दाम्पत्य–जीवन का वर्णन है। रजनी बड़े घर की बेटी है और प्रभाकर एक लेक्चरर है। रजनी को शुरुआती दौर में अपने पति के साथ सामंजस्य बैठाने में समस्या होती है।

रजनी अपने आपको प्रभाकर के यहाँ विपरीत स्थिति में पाती है। प्रभाकर लेक्चरर के साथ–साथ क्रांतिकारी भी है। उसने पहले अपने पति का विरोध किया, लेकिन धीरे–धीरे उसका विचार–क्षेत्र भी विस्तृत होता जा रहा था। पति के खिलाफ वारंट निकलता है। उसका पति प्रभाकर घर छोड़कर भागने की स्थिति में है। रजनी भी प्रभाकर के साथ जाने को इच्छुक हो जाती है। वह कहती है––

"मैं तुम्हारी मदद नहीं करूँगी, कर भी नहीं सकती। लेकिन तुम्हारे काम में दखल भी न दूँगी। चाहे जैसे जीवन व्यतीत करना पड़े, तुम्हें उलहना नहीं दूँगी। तुम इतना भी विश्वास कर लो कि तुम्हारी जो बातें जान जाऊँगी वे किसी से कहूँगी नहीं। इसके अलावा और क्या करना होगा, बता दो। देखूँ, कर सकती हूँ कि नहीं।"[2]

---

[1] अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 567
[2] वही, पृष्ठ संख्या – 110

वह अपने पति का साथ यहाँ तक देने को तैयार हो जाती है कि वह भी अपने हाथों में रिवाल्वर उठा लेती है। "यह निर्णय उस पर पति द्वारा या सामाजिक संस्कारों द्वारा थोपा नहीं गया था। यह उसका अपना निर्णय था। भारतीय परिवेश में नारी का विचार–क्षेत्र कैसे विस्तृत होता जा रहा था और कर्म क्षेत्र में भी वह कैसे पुरुष का साथ देने में उत्साहित हो रही थी, इस बात की ओर यह कहानी संकेत करती है।"[1]

स्त्री–पुरुष संबंधों का एक पहलू उनकी संतान होती है। अज्ञेय के द्वारा यह पहलू भी अछूता नहीं रहा है। अज्ञेय ने अपनी कहानियों में स्त्री–पुरुष संबंधों के बीच संतान को लेकर उठनेवाली समस्याओं का जिक्र किया है। साथ–ही–साथ इस समस्या को लेकर व्यक्ति के मानस की स्थितियों को भी स्पष्ट किया है। 'मेजर चौधरी की वापसी' कहानी में संतान को लेकर एक मेजर की मनोव्यथा का चित्रण है। यह कहानी एक मेजर की है, जो युद्ध में घायल हो जाने के कारण संतान–प्राप्ति के योग्य नहीं रहा है। उसे इस चीज का अत्यंत दुःख है। अज्ञेय ने अपनी इस कहानी के बारे में जो बातें कहीं हैं, वे महत्त्वपूर्ण एवं ध्यान देने योग्य हैं। उन्होने इस संदर्भ में लिखा है––

"यौन संभोग के संदर्भ में नामर्दी की कहानियाँ मिल जाएँगी –– वैसी स्थिति में पुरुष की 'यंत्रणा' और 'संत्रास' का चित्र भी मिल जाएगा, (यह तो आज का सामाजिक यथार्थ है!) पर युद्ध में आहत होकर संतानोत्पत्ति के लिए असमर्थ हो गए युवा पति की मनोव्यथा का चित्र कहाँ है ? (और मनोव्यथा केवल 'अपना' दर्द नहीं होती, अपने कारण दूसरे को मिलनेवाले दर्द की पहचान भी होती है,

[1] कथाकर अज्ञेय, डा. चन्द्रकांत म. बांदिवडेकर, पृष्ठ संख्या – 148

प्रेमी की संवेदना का यह विस्तार भी एक मूल्य है!) और कौन–सा दूसरा तर्जे–बयाँ उसके लिए अधिक उपयुक्त होता ?''[1]

हकीकत में कहानी के अंर्तगत् मेजर चौधरी की मनोव्यथा का वर्णन अद्वितीय है। वह संतान–प्राप्ति के योग्य नहीं रहा, उसे इस चीज का दुःख है––

''भरती होने के साल–भर पहले मेरी शादी हुई थी। तीन साल हो गये। हम लोग साथ लगभग नहीं रहे –– वैसी सुविधाएँ नहीं हुईं। हमारी कोई संतान नहीं है।''[2]

शादी के बाद मेजर चौधरी ने पहले अपनी पत्नी से प्रेम भाव बढ़ाया ताकि एक दूसरे को समझ सकें। वह इस बारे में कहता है––

''सोचता हूँ, दाम्पत्य–जीवन में शुरू में –– इतनी –– कोमलता न बरती होती! कहते हैं कि स्त्री–पुरुष में पहले सख्य आना चाहिए –– मानसिक अनुकूलता ––''[3]

शादी के बाद दाम्पत्य–जीवन में स्त्री–पुरुष में पहले सख्य आना चाहिए –– यह बात बहुत महत्वपूर्ण है। अज्ञेय ने अपनी कहानियों में स्त्री को आदर के साथ एक उच्च स्थान दिया है। कहीं भी स्त्री को भोग्य–वस्तु के रूप में प्रस्तुत नहीं किया। वे स्त्री के ऊपर हो रहे अन्याय के प्रति हमेशा विद्रोही नजर आते हैं। उन्होंने अपनी कहानियों के माध्यम से स्त्री की दयनीय स्थिति के प्रति चिंता जतायी है। 'मेजर चौधरी की वापसी' कहानी से यह स्पष्ट होता है। मेजर चौधरी को

---

[1] भूमिका, अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 24
[2] अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 544
[3] वही, पृष्ठ संख्या – 544

इस बात का दुःख है कि उसकी कोई संतान नहीं है और उसकी पत्नी अब कैसे जियेगी ? वह कहता है––

"हमारी कोई संतान नहीं है। और जब –– जिससे आगे कुछ नहीं है वह सख्य भी कैसे हो सकता है ? उसे एक संतान का ही सहारा होता ... कुछ नहीं ?"[1]

वास्तव में इस कहानी में मेजर चौधरी का दुःख बहुत गहरा है। स्त्री–पुरुष संबंधों में संतान की महत्ता को उनकी कहानी 'इंदु की बेटी में भी देखी जा सकती है। संतान को गृहस्थ–जीवन की आवश्यकता बतलाते हुए इस कहानी में रामलाल और इंदु के दाम्पत्य–जीवन का चित्रण किया गया है। इस कहानी में वर्णन है––

"रामलाल की शादी हुए दो बरस हो चले हैं। दो बरस में शादी का नयापन पुराना हो जाता है, तब गृहस्थ–जीवन का सुख नयेपन के अलावा जो दूसरी चीजें होती हैं, उन्हीं पर निर्भर करता है। मातृत्व या पितृत्व की भावना, समान रूचियाँ, इकट्ठे बिताये हुए दिनों की स्मृतियाँ, एक–दूसरे को पहुँचाये गये सुख–क्लेश की छाप –– नयापन मिट जाने के बाद ये और ऐसी चीजें ही ईंटे होती हैं, जिनसे गृहस्थी की भीत खड़ी होती है। और रामलाल के जीवन में ये सब जैसे थे ही नहीं। उसके कोई संतान नहीं थी, जहाँ तक उसके दाम्पत्य–जीवन के सुख–दुःख की उसे याद थी, वहाँ तक उसे यही दीखता था कि उन्होंने एक–दूसरे को कुछ दिया है तो क्लेश ही दिया है।"[2]

---

[1] अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 545
[2] वही, पृष्ठ संख्या – 424

रामलाल अपने जीवन में संतान के अभाव के कारण खुश नहीं है। उसे लगता है कि इसके लिए इंदु दोषी है। वह अपनी पत्नी से खफा है क्योंकि उसे कहीं न कहीं महसूस होता है कि उसकी पत्नी ने उसके जीवन में नीरसता ला दी है। एक बार दोनों ट्रेन से कहीं जा रहे थे। रास्ते में इंदु को प्यास लगती है। उसकी प्यास बुझाने के लिए रामलाल गाड़ी के प्लेटफॉर्म पर रूकने पर पानी के लिए गाड़ी से नीचे उतरता है, तभी गाड़ी खुल जाती है। इंदु बैचेन हो जाती है और वह बाहर झाँकने लगती है। इसी क्रम में वह ट्रेन से नीचे गिर जाती है और ट्रेन के पहिए से कटकर उसकी मौत हो जाती है। रामलाल इस घटना से काफी आहत होता है।

इस घटना के घटने के बीस साल बाद रामलाल उसी स्टेशन पर जाता है, जहाँ उसकी पत्नी मर गयी थी। वहाँ उसे एक औरत के द्वारा त्यागी गयी एक बच्ची मिलती है। वह उस बच्ची को अपनी पत्नी की देन समझकर पालने लगता है और उसका नाम इंदुकला रखता है।

"गाँव के लोग कहते हैं कि रामलाल पागल है। पैसे वाले भी पागल होते हैं। और इंदु जहाँ–जहाँ जाती है, वे उँगली उठाकर कहते हैं –– "वह देखो, उस पागल बूढ़े की बेटी।" इसमें बड़ा गूढ़ व्यंग्य होता है, क्योंकि वे जानते हैं कि बूढ़ा रामलाल किसी के पाप का बोझ ढो रहा है। लेकिन रामलाल को किसी की परवाह नहीं है, वह निर्द्वन्द्व है। उसके हृदय में विश्वास है। वह खूब जानता है कि उसकी क्षमाशीलता इन्दु ने स्वयं प्रकट होकर अपने स्नेहपूर्ण अनुकम्पा के चिह्न–स्वरूप अपना अंश और प्रतिरूप वह बेटी उसे भेंट की थी।"[1]

[1] अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 430

संतानहीनता का बोध 'हीली–बोन् की बत्तखें' कहानी में हीली को भी है। उसने अपने जीवन में प्यार पाया था, पर बात आगे नहीं बढ़ पायी थी। उसने अपनी संतान की इच्छा कीं पूर्ति के लिए बत्तखें पाल ली थीं। कैप्टन दयाल के द्वारा बत्तखों के मारने के दोषी नर लोमड़ी के मारे जाने पर उसे हत्यारा कहती है क्योंकि लोमड़ी के अनाथ हुए बच्चों को देखकर उसकी संवेदना आहत होती है। लोमड़ी के बच्चों को देखकर उसका वात्सल्य उमड़ पड़ता है। इस कहानी में संतान के अभाव के फलस्वरूप हीली की मनोव्यथा का चित्रण है। अज्ञेय ने स्वयं इस कहानी के बारे में लिखा है––

"निःसंतान कुंठित नारी के चित्र भी हैं, पर क्यों 'हीली–बोन् की बत्तखें' कम प्रभावी मानी जाएगी केवल इस पर कि उसने इस कुंठा की उग्र प्रतिक्रिया को तिर्यक् रूप से दिखाया है –– जैसे कि कुंठाएँ अभिव्यक्त होती हैं ?"[1]

अज्ञेय ने स्त्री–पुरुष संबंधों को अपनी कहानियों में एक नये ढंग से पेश किया है। सभी चीजों को व्यक्ति के माध्यम से देखा गया है। दाम्पत्य–जीवन में उनकी कहानियों में जो टकराव है, वह मानसिक धरातल पर ज्यादा है। किंसी भी चीज को लेकर पति या पत्नी अपने ही मन में उलझे हुए हैं। वे एक दूसरे को अपनी उलझन नहीं बतला रहे हैं। टकराव कहीं भी उग्र रूप में नहीं है। ऐसा नहीं है कि टकराव के कारण परिवार टूटने के कगार पर पहुँच गया हो। पति और पत्नी भारतीय परंपरा के अनुसार मानसिक क्लेश को ढोते हुए भी अपनी–अपनी गृहस्थी चला रहे हैं। उनकी मात्र एक कहानी 'वे दूसरे' में टकराव की स्थिति चरम सीमा पर पहुँच गयी है, जिसके कारण पति और पत्नी को तलाक लेना

[1] भूमिका, अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 24

पड़ता है। तलाक का जो कारण है, वह एक मनोवैज्ञानिक गाँठ है। यह गाँठ पति और पत्नी को सहज एवं स्वस्थ नहीं होने देती है। वैवाहिक जीवन में हेमंत और सुधा को लगता है कि वे साथ नहीं रह सकते। अतः दोनों के बीच तलाक हो जाता है। टकराव इतना ज्यादा है कि तलाक के समय हेमंत जब सुधा से एक प्रश्न पूछता है तो सुधा का उत्तर उसे आहत कर देता है––

"और उसने पूरा साहस बटोर कर अपने मन की बात कह डाली,"और अगर तुम मुझे इतना भूल सको –– यानी मेरे साथ की कटुता को –– दोबारा विवाह की बात तुम्हारे मन में उठे, तो –– मुझे बड़ी सान्त्वना मिलेगी –– मेरा अनुताप तब भी मिटेगा या नहीं यह तो नहीं कह सकता, पर इतना तो मान सकूँगा कि मैं सदा के लिए शाप न बना, कि ––"

अब सुधा फिर उसकी ओर मुड़ी। अब उसने अपने को वश में कर लिया था –– वह अप्रतिहत मुसकान उसके चहरे पर नहीं थी। उसने रूखे स्वर से कहा, "मेरे विवाह की बात सोचने की तुम्हें जरूरत नहीं है। हाँ उससे तुम अपने को अधिक स्वतंत्र महसूस कर सकोगे, यह तो मैं समझती हूँ।"[1]

आखिर ऐसा क्या था, जिसके कारण टकराव चरम सीमा पर पहुँच गया। हेमंत अपने मन में सोच रहा है। उसे ख्याल आता है –– संभोग के क्षण का दृश्य। उसका मन व्याकुल हो उठता है। हेमंत की चिंता सामने आती है कि यह अपर–शरीरत्व का भाव मिटता क्यों नहीं ?

"उसने किंचित् बल से सुधा का परे को मुड़ा मुँह अपनी ओर फिराया –– कदाचित् उसकी आँखों में आँखें डालकर दोनों इस खाई को पार कर

[1] अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 515

सकें –– लेकिन सुधा की आँखें जोर से भिंची हुई थीं –– क्यों ? वासना अन्धकार माँगती है शायद, ताकि वह अपनी ज्वालामयी सृष्टि को अपने ढंग से देखे, यथार्थ उसमें बाधा न दे –– पर बंद आँखें –– क्या वह ज्योतिः शरीर अंधी आँखों से ही देखा जायेगा ? पर अंधी आँखें पृठक आँखें हैं, और वासना अगर युत नहीं है तो कुछ नहीं है––

उसने भर्राये स्वर में कहा, "आँखें खोलो ––"

वह जान सका कि आँखें खुलने के साथ–साथ सुधा का शरीर सहसा कठोर पड़ गया है, और वह जान सका कि पहचान उन आँखों में नहीं थी; उन आँखों में था –– वह, वह दूसरा, और इसलिए आँखें बंद थीं।"[1]

सुधा के अंदर एक मनोवैज्ञानिक गाँठ बन गयी है, जिसके कारण वह संभोग के समय कठोर हो जाती है। हेमंत ने सुधा से इसलिए विवाह किया कि वह एक विवाहित पुरुष से फँसी थी। वह नहीं चाहता था कि किसी का परिवार टूटे, किन्तु इस चाहत के कारण उसकी यह स्थिति है। इस कहानी में संबंधों को लेकर मानसिक तनाव की अभिव्यक्ति अद्‌भुत है।

अज्ञेय ने स्त्री–पुरुष संबंधों के सभी पहलुओं पर कहानियाँ लिखीं हैं। उन्होंने विधवा जीवन से संबंधित भी एक कहानी लिखी है–– 'पगोडा वृक्ष'। एक विधवा स्त्री के जीवन में एक रात एक क्रांतिकारी पुरुष के आने के फलस्वरूप होनेवाली गतिविधियों का वर्णन है। एक अनजान पुरुष के लिए अपना सबकुछ न्योछावर करने के लिए वह विधवा महिला कैसे तैयार हो जाती है, इसकी प्रस्तुति इस कहानी में हुई है।

---

[1] अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 517

उस विधवा महिला का नाम सुखदा था। विधवा हुए उसे आठ साल हो गये थे। वैवाहिक जीवन के सुख भी उसने चार साल ही पाये थे। उन चार सालों में अपने पति से भी कोई खास सामंजस्य नहीं बैठा पायी थी। विधवा–जीवन बिताते हुए उसका जीवन लगभग पगोडा वृक्ष की तरह निष्पर्ण, निस्तेज और ठूंठ हो गया था। इस कहानी में अज्ञेय ने विधवा के पारिवारिक या सामाजिक पक्ष की ओर ध्यान नहीं दिया है। उन्होंने विधवा के जीवन की उस घटना की ओर संकेत किया है, जिसके फलस्वरूप उसके जीवन को एक नया अर्थ मिला। वह उस पगोडा वृक्ष की भाँति ही परिवर्तित हो गयी, जो एक बार ही सही पूर्णतः पुष्पित होता है।

सुखदा के घर एक रात एक क्रांतिकारी युवक दिनेश या सूर्यकान्त शरण माँगने आता है। पुलिस उस युवक के पीछे लगी हुई है। सुखदा उसे शरण देती है, खाना खिलाती है, उसे घर से जाने के लिए भी कह डालती है। पता नहीं फिर उसे क्यों बुला लेती है। बातचीत के क्रम में उस युवक के द्वारा 'उमा' नाम की महिला का जिक्र हो जाने पर, उसके बारे में पूछना चाहती है। जो भी हो, उसके जीवन में उस समय एक खास तरह की घटना घटती है और यह घटना उसके पूरे जीवन को नये अर्थ में सिंचित कर देती है। कहानी में वर्णन है––

"उसके भीतर एकाएक ही कुछ जाग उठा –– या कुछ टूट गया। जिस प्रकार उन्मत्त व्यक्ति के ऊपर ठंडा पानी पड़ने से उसका खुमार एकाएक टूट जाता है –– या उसकी साधारण चेतना जाग उठती है। उसे मालूम हुआ, अब तक वह जो कुछ कर रही थी, एक नशे में कर रही थी ··· बाह्य वस्तुओं की अनुभूति उसे होती थी पर नहीं होती थी। इंद्रियाँ अपना काम करती थीं, किन्तु मस्तिष्क

उनकी भाषा को कुछ काल के लिए भूल गया था –– या समझता ही नहीं था –– और दिनेश के सो जाने के कुछ क्षण बाद ही उसने जागकर अपने सामान्य कर्म आरम्भ कर दिये थे –– अब वह एक अपूर्व चेतना से धधक उठा था ...''[1]

युवक के चले जाने के बाद सुखदा के घर पुलिस आती है। वह पुलिस को उस क्रांतिकारी युवक के बारे में कुछ नहीं बतलाती है। पुलिस संदेह के कारण उसे गिरफ्तार कर लेती है और साथ चलने के लिए दो मिनट का समय देती है। सुखदा दो मिनट में जो भी करती है, वह इस प्रकार है––

''वह उस आले के पास गयी, जिसमें प्रतिमा रखी थी, और वहाँ से उसने अपने पति का चित्र उठाया। उस फ्रेम में से चित्र निकालकर क्षण–भर देखती रही, फिर धीरे–धीरे फाड़ने लगी ... दो, चार, आठ ... सैंकड़ों टुकड़े करके उसे प्रतिमा के पास रख दिया।''[2]

''सुखदा को याद आया, उसके पास कुल दो मिनट का समय था। वह क्षण–भर अनिश्चित खड़ी रही, फिर एकाएक प्रार्थना के लिए झुक गयी। अपने देवता के आगे नहीं, अपने पति के फटे हुए चित्र के आगे नहीं, किन्तु उस चौकी के आगे, जिस पर दिनेश–या–सूर्यकान्त बैठे–बैठे सो गया था। उसने घुटने जमीन पर टेक दिए और सिर को धीरे से चौकी पर नवा दिया ...

उस अपने जीवन के अपूर्व एक मिनट में उसने किससे क्या प्रार्थना की, कौन जाने ... किन्तु जब वह उठी, तब मानो उसके प्राणों का तूफान बैठ गया था ... उसकी आत्मा के सभी संस्कार, अच्छे या बुरे, नये या पुराने, एक पुरानी

---

[1] अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 314
[2] वही, पृष्ठ संख्या – 319

केंचुल की तरह झड़ गये थे, वह निरावरण हो गयी थी ... सुखदा मुख पर शांति थी — उस शांति में वैराग्य की, त्याग की भावना स्पष्ट थी; किन्तु वह त्याग वैधव्य की भाँति मलिन या उद्विग्न नहीं था ... "[1]

"यही जीवन का चरम उद्देश्य था — सृष्टि का चरम साफल्य, अनुभूति का अंतिम विकास — सुख की अंतिम पराकाष्ठा ... पीड़ा का, उत्कट पीड़ा का ज्ञान — ऐसी पीड़ा का, जो कि स्वयं अपनी इच्छा से, अपने हाथों, की स्वागत भावना से, अपने ऊपर ली गयी है ... यह आत्म–निछावर की चेतना ...

सुखदा को ऐसा प्रतीत हुआ, उसका वर्षों का वैधव्य, और उससे पूर्व की जीवित मृत्यु, आज एकाएक अपनी सीमा पर पहुँच गये हैं — समाप्त हो गये हैं; और वह आज एक नयी स्त्री, एक नयी शक्ति हो गयी हैं ..."[2]

इस तरह सुखदा के जीवन में परिवर्तन होता है। इस कहानी में "एक क्रांतिकारी एक विधवा युवती के हृदय में न सिर्फ आकर्षण की एक अदृश्य लहर उठा जाता है, अपने उत्सर्ग से उसमें एक गहरा और आधारभूत परिवर्तन लाने में भी सफल होता है। सिपाहियों द्वारा पकड़ी जाने पर सुखदा की मुद्रा नये संकल्प और अभियान से पूर्ण है जैसे अपना पिछला सब कुछ छोड़कर हिन्दू समाज में वैधव्य के अभिशाप को भी एक नई गरिमा और तेज से भर उठी हो। उसके अंदर घटित इस गुणात्मक परिवर्तन को पगोडा वृक्ष के माध्यम से बहुत सांकेतिक और प्रतीकात्मक रूप में व्यक्त किया गया है . . .।"[3]

---

[1] अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ, पृष्ठ संख्या – 319
[2] वही, पृष्ठ संख्या – 320
[3] हिन्दी कहानी का विकास, पृष्ठ संख्या – 154

वास्तव में अज्ञेय ने स्त्री–पुरुष संबंध के विविध प्रसंगों को एक नये अंदाज में अपनी कहानियों में पिरोया है। उन्होंने प्रेम का जो वर्णन किया है, वह प्रेम वासना से अलग और नये अर्थों से सिंचित है। उनका प्रेम आत्मदान और उपासना का समर्थक है। दाम्पत्य–जीवन के जो प्रसंग उनकी कहानियों में आए हैं, वे स्त्री–पुरुष संबंधों को एक नया आयाम देते हैं। अज्ञेय स्त्री–पुरुष संबंधों के वर्णन में कहीं–भी पुरुषवादी नहीं दिखते। उनके यहाँ स्त्री और पुरुष दोनों समान हैं। प्रेम में स्त्रियों की तुलना में पुरुष अधिक त्याग करते नजर आते हैं। दाम्पत्य–जीवन के खट्टे–मीठे प्रसंगों के साथ स्त्री–पुरुष की मानसिक उलझनों का चित्रण अद्वितीय है।

उपसंहार

'अर्थवत्ता की खोज' अज्ञेय की लेखनी का आधार रहा है। उन्होंने अन्य विधाओं की भाँति कहानी–विधा को भी 'अर्थवत्ता की खोज' का माध्यम बनाया। यही 'अर्थवत्ता की खोज' उन्हें अपने समकालीन कहानीकारों के बीच एक अलग पहचान देती है और उनकी कहानियों को भी कालजित बनाती है। अज्ञेय ने कहानी लेखन के क्षेत्र में युवावस्था के आरंभ में ही प्रवेश किया। चूँकि वे स्वच्छंद व्यक्तित्व वाले व्यक्ति रहे हैं, अतः उनकी लेखनी परंपरागत शैली को नहीं अपना पाती। उन्होंने अन्य लेखकों को अपने आदर्श के रूप में ग्रहण नहीं किया। उन्होंने हमेशा कुछ नया करना चाहा। कुछ नया करने का यही आग्रह उन्हें सबसे अलग एक नयी पहचान देता है। अज्ञेय हमेशा ऐसी कहानी के पक्ष में रहे, जिसके माध्यम से जीवन के 'प्रगूढ़ रहस्यमय सत्य' को दिखाया जा सके।

अज्ञेय ने लगभग सड़सठ कहानियाँ लिखी हैं। इनमें से अधिकांश कहानियाँ आज भी नयी लगती हैं। निःसंदेह ऐसी कहानियों के बनने में अज्ञेय की उस क्षमता का असीम योगदान है, जो 'मानव–मन के सूक्ष्मतर स्तर' को पकड़ पाने में सक्षम है। अज्ञेय व्यक्ति के स्वतंत्र विकास के पक्षधर रहे हैं, ऐसा स्वतंत्र व्यक्तित्व जो दूसरों को भी स्वतंत्र करे। वे सर्जना के केन्द्र में व्यक्ति को रखते हैं और यहीं से उनकी सर्जना–शक्ति का विकास भी होता है। कहीं न कहीं सर्जना के केन्द्र में व्यक्ति को रखने का मुख्य कारण उनका कवि व्यक्तित्व है। वे समाज का अध्ययन व्यक्ति के माध्यम से करते हैं न कि व्यक्ति का अध्ययन समाज के माध्यम से। अज्ञेय की मान्यता है कि यदि कहानीकार के पास कवि–दृष्टि हो तो वह और भी अच्छा कहानीकार हो सकता है। यह सही भी है क्योंकि अज्ञेय ने अपनी कहानियों के

माध्यम से स्वयं यह सिद्ध भी कर दिया है। कवि–दृष्टि होने के कारण ही उनकी कहानियाँ इतनी अच्छी बन गयी हैं कि वे पाठक के मन में अद्‌भुत प्रभाव छोड़ती हैं। उनकी कहानियों की प्रासंगिकता आज भी है।

अज्ञेय कहानी में बाह्य यथार्थ की जगह आंतरिक यथार्थ पर जोर देते हैं। उनकी दृष्टि में बाह्य यथार्थ की सत्यता आवश्यक है। किन्तु वह यथार्थ सीधे–सीधे न आकर, आत्म अनुभूति से छनकर आये तभी अच्छा है। साथ ही उसमें आंतरिक यथार्थ भी होना चाहिए। चूँकि अज्ञेय के यहाँ कला की रचना का संबंध अर्थवत्ता से जुड़ा है, इसलिए वे 'अर्थवत्ता की खोज' वस्तु यथार्थ में नहीं, अपितु विषयी गत यथार्थ में ही मानते हैं। अज्ञेय का उद्देश्य केवल अभिव्यक्ति नहीं रहा है। रचना कर्म में उनके लिए 'अर्थवत्ता की खोज' और 'सम्प्रेषण' का विशेष महत्व रहा है। जिस माध्यम से वे इस चीज को सम्प्रेषित नहीं कर पाये, उसे उन्होंने त्याग दिया। चूँकि अज्ञेय की जिज्ञासा और दिलचस्पी धीरे–धीरे मनोवैज्ञानिक यथार्थ की ओर बढ़ती गयी, इसलिए उन्हें इस यथार्थ का वर्णन करने के लिए कहानी का व्यास छोटा लगा। उन्हें केवल कहानी में ही नहीं, अपितु उपन्यास में भी मनोवैज्ञानिक यथार्थ का संपूर्ण चित्र खींच पाना असंभव लगा।

उन्होंने स्वयं कहानी का मनोवैज्ञानिक यथार्थ से कोई असामंजस्य नहीं माना है। इसके उदाहरण के लिए उन्होंने अपनी कहानियों की बात भी कही है। इनकी कहानियों में मनोवैज्ञानिक तथ्य भरे पड़े हैं। किन्तु इस आधार पर यह नहीं कहा जा सकता कि उन्होंने किसी विशिष्ट मनोवैज्ञानिक मान्यता की स्थापना हेतु किसी कहानी की रचना की हो। उनकी कहानियों में यह यथार्थ सीधे–सीधे नहीं

आया है। यह कहानियों के भीतर से ही फूटता नजर आता है। उन्होंने अपनी अधिकांश कहानियों के पात्रों के मनोविश्लेषण में फ्रायड के उन मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों का उपयोग किया है, जिनके आधार पर फ्रायड ने मनुष्य के व्यक्तित्व, उसकी क्रियाओं और अभिवृत्तियों का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण किया है। किन्तु उन्होंने मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों को उस रूप में अपनी कहानियों में नहीं अपनाया, जिस रूप में वे हैं बल्कि उन्हें आत्मसात् करके एक नये संदर्भ में कहानी के पात्रों के माध्यम से प्रस्तुत किया। इन सिद्धांतों का प्रयोग अज्ञेय ने अपनी कहानियों के पात्रों के मानस की परत दर परत खोलने में किया। उनकी कहानियों में 'अछूते फूल', 'हीली–बोन की बत्तखें', 'हरसिंगार', 'सिगनेलर', 'मनसो', 'अकलंक', 'रोज', 'वे दूसरे' आदि ऐसी कहानियाँ हैं, जिसमें पात्रों के मानस का विश्लेषण अद्वितीय है।

अज्ञेय अपनी कहानियों में स्त्री–पुरुष संबंधों का गहरा विश्लेषण कर पाने में सफल रहे हैं। उन्होंने अपनी कहानियों में स्त्री–पुरुष संबंधी प्रसंगों को इस प्रकार पिरोया है कि ये सभी प्रसंग जीवन की सत्यता को लेकर जीवित हो उठे हैं। उन्होंने प्रेम, प्रेम की महत्ता, प्रेम के स्वरूप, दाम्पत्य–जीवन और उसके विभिन्न प्रसंगों को काफी गहराई के साथ अपनी कहानियों में उकेरा है।

उनकी कहानियों में प्रेम का अद्वितीय चित्रण देखने को मिलता है। उनके यहाँ प्रेम वासना से अलग है। अज्ञेय ने प्रेम के लिए अभिव्यक्ति को आवश्यक नहीं माना है। उन्होंने अपनी कहानियों में प्रेम को आत्मदान और उपासना के रूप में प्रस्तुत किया है। 'सिगनेलर' और 'मनसो' कहानी में इसी प्रकार के प्रेम का वर्णन है। उनके यहाँ प्रेम किसी स्मारक का मोहताज नहीं है। वह एक दूसरे के प्रति

आत्मसमर्पण और आत्मदान चाहता है। साथ ही इस आत्मदान के बदले कोई प्रतिदान नहीं चाहता। उनकी कहानियों में स्त्री–पुरुष संबंधों के बीच देश प्रेम और वैयक्तिक प्रेम को लेकर एक द्वन्द्व दिखाई पड़ता है। यह द्वन्द्व 'अकलंक', 'हारिती' और 'अंगोरा के पथ पर' कहानियों में देखा जा सकता है। इस तरह उनकी कहानियों में प्रेम को जहाँ एक नया अर्थ मिला है, वहीं प्रेम नहीं पा सकने की स्थिति के फलस्वरूप उत्पन्न हुए व्यवहारों का भी वर्णन है। 'हीली–बोन की बत्तखें' कहानी में इस स्थिति का चित्रण है। इसमें एक स्त्री की गहरी संवेदना और उसके मन की उलझनों का वर्णन है। उसके जीवन में एक पुरुष के अभाव के उपरांत की रिक्तता का वर्णन है। चाहे वह पुरुष हो या स्त्री, दोनों का एक दूसरे के लिए होना आवश्यक है। 'जिजीविषा' कहानी में इसी तथ्य को उजागर किया गया है।

अज्ञेय ने अपनी कहानियों में स्त्री–पुरुष संबंधों के बीच उभर रहे नीरसता के माहौल का भी चित्रण किया है। पति–पत्नी के बीच नीरसता के माहौल का वर्णन उनकी 'रोज' कहानी में देखा जा सकता है। यहाँ पति–पत्नी का परंपरागत संबंध है, जिसमें आनंद के सिवाय कर्त्तव्य ही सब कुछ है। उनके यहाँ दाम्पत्य–जीवन के और भी कई प्रसंग चित्रित हुए हैं। उन्होंने अपनी कुछ कहानियों में गृहस्थ–जीवन के लिए बच्चों की उपयोगिता पर भी बल दिया है। 'इंदु की बेटी', 'हीली–बोन की बत्तखें' और 'मेजर चौधरी की वापसी' कहानियों में इसे देखा जा सकता है। 'मेजर चौधरी की वापसी' कहानी में युद्ध में घायल हो जाने के कारण संतानोत्पत्ति में असमर्थ हो गए एक युवा पति की मनोव्यथा का चित्रण मार्मिक है।

अज्ञेय ने शारीरिक पवित्रता का भी प्रश्न उठाया है। वे पुरुष की अपेक्षा स्त्री के लिए इस पवित्रता की अनिवार्यता के विरोध में दिखते हैं। वे इस देश में जन्म लेना स्त्री के लिए मृत्यु–यंत्रणा से भी बढ़कर मानते हैं। वे अपनी कहानियों में कहीं भी पुरुषवादी नहीं दिखते हैं। उनके यहाँ स्त्री और पुरुष दोनों समान हैं। प्रेम में स्त्रियों की तुलना में पुरुष अधिक त्याग करते नजर आते हैं। वास्तव में उनके यहाँ स्त्री–पुरुषों की मानसिक उलझनों का चित्रण अद्वितीय है।

आखिर अज्ञेय कहानी–विधा से विमुख क्यों हो गये ? उन्होंने कहानी–विधा के छोड़ने के अपने तर्क भी दिए हैं। जो भी हो, किन्तु इतना सत्य है कि कहानी–विधा को छोड़ने के पीछे यह कारण कभी नहीं रहा कि वे अच्छी कहानियाँ नहीं लिख रहे थे। उन्होंने लगभग सड़सठ कहानियाँ लिखीं। सभी नहीं तो अधिकांश कहानियाँ स्वयं सिद्ध करती हैं कि वे सशक्त ही नहीं सफल कहानीकार भी थे।

संदर्भ सूची

आधार ग्रंथ

1. अज्ञेय : 'अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ'
राजपाल एण्ड सन्ज प्रकाशन,
दिल्ली, संस्करण – 1997

सहायक ग्रंथ

1. अज्ञेय : 'लौटती पगडंडियाँ'
राजपाल एण्ड सन्ज प्रकाशन,
प्रथम संस्करण – 1975

2. अज्ञेय : 'मेरी प्रिय कहानियाँ'
राजपाल एण्ड सन्ज प्रकाशन,
संस्करण – 1978

3. ओम प्रभाकर : 'अज्ञेय का कथा–साहित्य'
नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली–7
प्रथम संस्करण – 1966

4. कान्ता (अरोड़ा) मेंहदीरत्ता : 'हिन्दी कहानी का मूल्यांकन'
राधाकृष्ण प्रकाशन,
पहला संस्करण – 1984

5. डॉ. चंद्रकांत म. बांदिवडेकर : 'कथाकार अज्ञेय'
हरियाणा साहित्य अकादमी,
चण्डीगढ़, प्रथम संस्करण – 1993

6. देवीशंकर अवस्थी : 'नयी कहानी : सन्दर्भ और प्रकृति' राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण – 1993

7. डॉ. धीरेन्द्र वर्मा (प्रधान संपादक) : 'हिन्दी साहित्य कोश', भाग– 1 एवं भाग– 2, ज्ञानमंडल लिमिटेड, वाराणसी, संस्करण – 2000

8. मुंशी प्रेमचंद : 'साहित्य का उद्देश्य' साहित्यागार प्रकाशक, जयपुर– 3, संस्करण – 1992

9. मधुरेश : 'हिन्दी कहानी का विकास' सुमित प्रकाशन, इलाहाबाद, द्वितीय संस्करण – 2000

10. मार्कण्डेय : 'कहानी की बात' लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण – 1984

11. मृत्युंजय सिंह : 'कवियों की कहानियाँ; एक मूल्यांकन', अनुराग प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण – 1995

12. राजकमल राय : 'अज्ञेय : सृजन और संघर्ष' लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद

प्रथम संस्करण – 1978

13. रामस्वरूप चतुर्वेदी : 'अज्ञेय और आधुनिक रचना की समस्या', भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नई दिल्ली– 32, चौथा संस्करण – 2000

14. रमेशचन्द्र शाह : 'अज्ञेय' साहित्य अकादमी, प्रथम संस्करण – 1990

15. हरिकृष्ण रावत : 'समाजशास्त्रीय चिन्तक एवं सिद्धांतकार', रावत पबिलकेशन्स, जयपुर, द्वितीय संस्करण – 2003

16. श्री लाल शुक्ल : 'अज्ञेय : कुछ रंग, कुछ राग' प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण – 1999

Jawaharlal Nehru University Library